RNI No. 7127/60

डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City / 411 2020-22

# संघशक्ति

मासिक समाचार पत्रिका

वर्ष : 57 अंक : 10 प्रकाशन तिथि : 25 सितम्बर कुल पृष्ठ : 36 प्रेषण तिथि : 4 अक्टूबर, 2020

शुल्क एक प्रति : 15/- वार्षिक : 150/- रुपये पंचवर्षीय 700/- रुपये दस वर्षीय 1300/- रुपये

आयुध बिन आयुध सम अड़ियो, ओछी ऊमर आयुवान।
साहित सिरजन कियो सांतरो, पाण पयोनिधि गीता पान।।

# हितकारी मेडिकोज

राजकीय चिकित्सालय के सामने, बाड़मेर-344001 राजस्थान
फोन : 02982226666

प्रो. पृथ्वी सिंह राठौड़
आजाद सिंह राठौड़
सिद्धार्थ सिंह राठौड़

-: सम्बंधित फर्म :-

हितकारी & स्वराज इंटरप्राइजेज प्राइवेट लिमिटेड
हितकारी प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड

# संघशक्ति

4 अक्टूबर, 2020

वर्ष : 56 अंक : 10

-: सम्पादक :-

लक्ष्मणसिंह बेण्यांकाबास

शुल्क – एक प्रति : 15/- रुपये, वार्षिक : 150/- रुपये, पंचवर्षीय : 700/- रुपये, दस वर्षीय : 1300/- रुपये


## विषय - सूची


| | | |
|---|---|---|
| ☞ समाचार संक्षेप | ✍ | 04 |
| ☞ चलता रहे मेरा संघ | ✍ श्री भगवानसिंह रोलसाहबसर | 05 |
| ☞ पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में) | ✍ श्री चैनसिंह बैठवास | 09 |
| ☞ श्री आयुवानसिंह एक महान व्यक्तित्व | ✍ श्री शिवबक्षसिंह चुई | 11 |
| ☞ भारतीय संस्कृति के प्राण मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम | ✍ स्वामी धर्मबन्धु | 13 |
| ☞ मेरी साधना | ✍ प्रो. रूपसिंह लिम्बड़ी | 19 |
| ☞ राव वीरमदेव सोनगरा | ✍ श्री हनुवन्तसिंह नंगली | 24 |
| ☞ महंत योगी दिग्विजयनाथ जी गौरक्षक पीठ.... | ✍ श्री अधिराजसिंह | 26 |
| ☞ विचार-सरिता (अष्ट पञ्चाशत् लहरी) | ✍ श्री विचारक | 28 |
| ☞ एकहत्तर बावड़ियों का नगर बूंदी | ✍ स्वामी गोपालआनन्द बाबा | 29 |
| ☞ चित्रकथा-'लोकदेवता बाबा रामदेव जी' | ✍ श्री ब्रजराजसिंह खरेड़ा | 32 |
| ☞ अपनी बात | ✍ | 34 |

# समाचार संक्षेप

## जन्म शताब्दी वर्ष :

श्री क्षत्रिय युवक संघ के द्वितीय संघप्रमुख पू. आयुवानसिंहजी का जन्म 17 अक्टूबर सन् 1920 को हुआ था। 17 अक्टूबर सन् 2019 से उनके जन्म का सौवां वर्ष प्रारम्भ हुआ। एक साधारण स्तर के परिवार में उनका जन्म हुआ लेकिन उनका जीवन असाधारण था। पूरा जीवन संघर्षशील बना रहा। हर काम योजनाबद्ध रूप से कर संघर्ष को आगे बढाते रहे। उनमें अद्‌भुत बौद्धिक प्रतिभा थी, जिसका परिचय उनके द्वारा रचित साहित्य से प्रकट होता है। समाज संगठक के रूप में उनका सम्पर्क साधारण से साधारण व्यक्ति से लेकर समाज के प्रतिष्ठित व्यक्तियों तथा राजाओं तक समान रूप से था। उनके पास साधनों की कमी थी पर कर्मठता की कमी नहीं थी। इसीलिए विपरीत परिस्थितियों में भी निरंतर कर्मशील बने रहे।

पू. आयुवानसिंहजी रचित 'मेरी साधना' पुस्तक श्री क्षत्रिय युवक संघ के साधक के लिए कर्म पथ का दिग्दर्शन कर सहयोग प्रदान करती है। साधक प्रेरणा प्राप्त करता है और आगे बढता है। 'ममता और कर्तव्य' पुस्तक ऐसी प्रेरक ऐतिहासिक कहानियों का खजाना है जिनको पढकर पाठक भाव विभोर हो जाता है और कर्तव्य के महत्त्व को समझता है। इतिहास का उनका अध्ययन मात्र हमारे पूर्वजों के उदात्त चरित्र की जानकारी के लिये ही नहीं था, हमारी कमियों को पहचानने के लिये भी था। उनकी रचना 'हमारी ऐतिहासिक भूलें' हमको भविष्य में उन कमियों को, उन अभावों को दूर करने की प्रेरणा देती है। उनकी पुस्तक 'राजपूत और भविष्य' वर्तमान परिस्थितियों में समाज के वर्चस्व को स्थापित करने के लिए पूरा दिशा-दर्शन का काम करती है।

समाज सेवा में ही नियोजित रहे। समाज ही उनका लगाव का विषय था, समाज ही उनके चिन्तन का विषय था और समाज ही उनका कार्यक्षेत्र था। वे बहुआयामी व्यक्ति थे पर हर आयाम का जुड़ाव समाज से ही था। उनकी राजनैतिक गतिविधियाँ भी समाज से जुड़ी रही। समाज पर आए संकट हेतु उन्होंने भूस्वामी आन्दोलन प्रारम्भ किया और सफल संचालन किया। आन्दोलन के माध्यम से लोकतांत्रिक व्यवस्था में होने वाले अन्याय के प्रति विरोध प्रकट करने की सीख भी समाज को दी।

अपने अन्तिम समय में भी वे संघर्षरत ही थे। बीमारी से संघर्ष, पर उस संघर्ष में भी निराशा नहीं, उत्साहपूर्वक बीमारी से लड़े। उनका तो पूरा जीवन ही संघर्ष की कहानी है और समाज के हर व्यक्ति के लिए प्रेरणादायी है। प्रभु हमें भी उनके जीवन से कर्मशील रहते हुए समाज सेवा की प्रेरणा दे।

जन्म शताब्दी वर्ष के पूर्व संघप्रमुख माननीय भगवानसिंहजी ने यह इच्छा प्रकट की थी कि इस जन्म शताब्दी वर्ष में पू. आयुवानसिंहजी से सम्बन्धित कम से कम सौ कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ। 17 अक्टूबर, 2019 को ही 24 सम्मिलित समारोह आयोजित हुए तथा 21 शाखा स्तर पर कार्यक्रम सम्पन्न हुए। इन कार्यक्रमों में पू. आयुवानसिंहजी का संघर्षपूर्ण जीवन परिचय दिया गया। उनके साहित्य की विषय वस्तु की जानकारी दी गई। संघ व समाज में उनके योगदान की बातें बताई गई। भूस्वामी आन्दोलन के संचालन की चर्चा हुई। चौपासनी विद्यालय को सरकार द्वारा अधिग्रहण के विरोध में आन्दोलन में महत्त्वपूर्ण भूमिका के बारे में बताया गया। 17 अक्टूबर, 2019 के पश्चात् 11 जगह इसी सम्बन्ध में सम्पर्क कर कार्यक्रम रखे गये। उसके बाद मई माह में होने वाले उच्च प्रशिक्षण शिविर में विभिन्न स्थानों से आए स्वयंसेवकों को कार्य देकर उनके वहाँ समारोह करने का निश्चय किया गया। लेकिन महामारी के कारण वह शिविर भी नहीं हो सका और समारोह भी किए नहीं जा सकते थे। अत: वर्चउल रूप से पू. आयुवानसिंहजी की रचना 'मेरी साधना' पर कार्यक्रम किए गये और रोज रात को दो या तीन अवतरणों पर चर्चा कर सभी 111 अवतरणों को पूरा किया गया। प्रतिदिन उनका स्मरण भी चलता रहा और एक ही जगह से सभी शाखाओं में पूरी पुस्तक पर कार्यक्रम हुए।

# चलता रहे मेरा संघ

**{उच्च प्रशिक्षण शिविर गनोड़ा (बांसवाड़ा) में 28 मई, 2019 को संघप्रमुख श्री भगवानसिंहजी द्वारा शिविरार्थियों हेतु विदाई संदेश।}**

आखिर वह दिन आ ही गया। यह सत्य है कि जो आया है उसे जाना है। इसको विदाई कहते हैं, अलगाव कहते हैं। श्री क्षत्रिय युवक संघ को जिसने समझ लिया, वह इस बात को भी समझ जाता है-**वासांसि जीर्णानि यथा विहाय, नवानि गृहणाति नरोऽपराणि।** गीता में भगवान ने कहा है कि जिसको हम मृत्यु कहते हैं, वह ठीक इसी प्रकार है कि जब वस्त्र पुराने हो जाते हैं, जीर्ण हो जाते हैं, तो उनको हम बदल लेते हैं। पर 'हम' नहीं बदलते हैं। यह विदाई आपको शारीरिक रूप से दी जा रही है, 'आपको' नहीं दी जा रही। ऐसे ही यह शरीर समाप्त हो जाता है, जीवात्मा वैसे ही रहती है। जीवात्मा किसी माता के गर्भ में नये वस्त्र धारण करती है। इस अटल सत्य को हम भी जीवन में घटित होते देख रहे हैं। जब आना होता है तो उसका स्वागत करते हैं, जब प्रस्थान होता है तो आँखें नम हो जाती हैं। भावनाओं के वशीभूत बहते हैं।

यह शिविर हमारा इतने दिनों का प्रयास रहा है। घर को, दुनिया को, सबको छोड़कर एक नई दिशा देने के लिए हम यहाँ आए हैं। हमारा यहाँ आना मात्र संयोग नहीं है, यह हमारे प्रारब्ध का फल है, हमारे किए हुए कर्मों का फल है। यही विधि का मंगल विधान है। प्रारब्ध न होता तो कोई यहाँ आ नहीं सकता, ऐसे दुरूह कार्य को करने के लिये। संसार को बदलने की बात तो बहुत लोग करते हैं, पर स्वयं को बदलने की बात कहीं भी नहीं की जाती है। यह दुनिया का सबसे बड़ा दुरूह कार्य है। भगवान ने कृपा की है आप पर कि एक श्रेष्ठ कार्य हो रहा है, एक यज्ञ, एक श्रेष्ठ हेतु के लिये आहुतियाँ डाली जा रही हैं, आपको भी आहुति देनी है। लगता तो यह है कि हम यहाँ अपनी इच्छा से आए हैं, पर भगवान की प्रेरणा के बिना कोई यहाँ आ नहीं सकता इसलिए हमको भगवान का सबसे बड़ा उपकार मानना चाहिए। उपकृत होना, कृतज्ञ होना इन्सानियत का सबसे बड़ा गुण है तो सबसे पहले हम ईश्वर के प्रति इस कृतज्ञता को अनुभव करें, उसके उपकार को अनुभव करें। भगवान ने चौरासी लाख योनियों में से मनुष्य योनि हमको दी है। बाकी सब योनियाँ अपने कर्मों का फल भुगतती हैं। हमको एक विशेष छूट मिली है कि अपने कर्मों के द्वारा, अपने पुरुषार्थ के द्वारा अपने बन्धन से मुक्ति पा सकते हैं। लोग दुख इसलिए पाते हैं कि उनको यह मालूम नहीं है, यह ज्ञात नहीं है कि इस दुख को छोड़ा जा सकता है, अपने प्रारब्ध को बदला जा सकता है। हमको भी पता नहीं है। उन प्रत्येक योनियों से, देव योनियों से हम कोई भिन्न नहीं हैं, फिर यह कलयुग है, युग का प्रवाह ही ऐसा है कि हम बह जाते हैं। तो भगवान की विशेष कृपा हुई कि युग प्रवाह के गन्दे नाले में से खींचकर हमको एक अच्छे कार्य के लिए बाहर निकाल कर राहत दी है। श्रेष्ठ कार्य करके अपना जीवन और संसार का जीवन सुखी बनाने का बीड़ा उठाने वाले कार्य में सम्मिलित किया। आप वो पहरूये हैं जो अपने आपको बदलकर संसार को बदलने में सहयोग करेंगे। राह को पार कर आप दूसरों को राह दिखायेंगे यह ईश्वर की कृपा का ही कारण है कि हम यहाँ आए हैं। इस संसार में मनुष्य योनि में आए, ऐसी माता के गर्भ में स्थापित किया जो एक जीवन ज्योति वाली, त्याग और बलिदान की धनी है। त्याग की सूची में प्रथम रहने वाले वंश में जीवन दिया है। हमको परमेश्वर का यह उपकार मानना चाहिए कि शायद हम तो इस योग्य नहीं थे लेकिन तुमने कृपा कर धरती पर ऐसे वंश में जन्म दिया। भारतवर्ष में जन्म मिलना, मनुष्य योनि में जन्म होना, क्षत्रिय जाति में जन्म होना जो रक्त बहानेसे कभी डरी नहीं, त्याग के लिए कभी पीछे नहीं रही, बड़े गौरव की बात है। लेकिन धीरे-धीरे कुछ विकृतियाँ आई और वे सब हमारे साथ भी

घटित हो रही हैं लेकिन परमेश्वर की कृपा आज भी है कि हम ऐसे श्रेष्ठ कार्य के यज्ञ में सम्मिलित हुए हैं।

हम सबको यहाँ जो श्रेष्ठ वचन कहे जा रहे हैं, वे किसी व्यक्ति के वचन नहीं हैं, वे भगवान के वचन हैं जो आप तक पहुँचाए जा रहे हैं। जो लोग यह सब कुछ हम तक पहुँचा रहे हैं, उन सबका हमको कृतज्ञ होना चाहिये। जो यह पूरा आयोजन करते हैं उनके प्रति हमको कृतज्ञ होना चाहिए। मैं तो कहता हूँ कि आपके माता-पिता के हम कृतज्ञ हैं कि उन्होंने हम पर भरोसा किया और आपको यहाँ भेजा। उस समय दिल गद्‌गद् हो जाता है जब माता-पिता अपने पुत्र के लिये कहते हैं कि यह समझ नहीं रहा है, इसको तुम ले जाओ। हमको, संघ को इस योग्य माना और भरोसा किया उन माता-पिता का भी उपकार है हम पर। इस संसार में जो कुछ भी किसी से भी हमको मिलता है, उन सबका उपकार है। गुरुजनों का उपकार है, शिक्षा देने वालों का उपकार है। नये-नये आविष्कार हुए हैं, जो वैज्ञानिकों ने किए हैं, उन सबका उपकार है। इन सभी उपकारों के फलस्वरूप ही हम जीवन जी रहे हैं और एक श्रेष्ठ जीवन की ओर अग्रसर हो रहे हैं। एक पथ भ्रष्ट जीवन जी रहे थे, अब हम एक दिव्य जीवन की यात्रा पर चल पड़े हैं। हमको एक मार्ग दिखाई दिया है, ऐसा मार्ग सुझाने वालों के प्रति भी हमें कृतज्ञ होना चाहिए। मैं तो यह भी कहूंगा कि जो क्षत्रिय युवक संघ का विरोध करते हैं, विचारधारा का विरोध करते हैं, उनके भी हम कृतज्ञ हैं। वे समय-समय पर हमें जाग्रत बनाए रखते हैं। कहीं हमको यह अहंकार न हो जाए, हम में यह दोष न आ जाए, हम में कहीं अशुद्धि न पनप जाए, जैसे हम भगवान के प्रतिनिधि हों, अवतार हों। इसलिए विरोध होना भी बहुत आवश्यक है। उस विरोध के बिना हम निर्मल नहीं बन सकते। हमें निर्मलता देने वाले उन विरोधियों का भी उपकार माने।

यहाँ आकर हमने जितने भी कार्यक्रम किये हैं, उन सब में हम सम्मिलित हुए हैं। चाहे वो किसी अवस्था में हो, किसी आयु में हो, कैसी भी शिक्षा हो। चाहे किसी प्रकार का गृहस्थ जीवन जीने वाले हों, चाहे श्रेष्ठ स्वयंसेवक हों। हम एक साथ खेले, एक साथ घटों में खड़े हुए, हमने एक साथ गीत गाये, एक साथ हमने चर्चा की ताकि हम सबके विचार समान हो जाएँ। हम सबके मन एक से हो जाएँ। यह केवल कहा नहीं, हमने इसका अभ्यास किया। अब जाते समय आँसू क्यों छलक रहे हैं? उदासी क्यों हो रही है? विचार आ रहे होंगे कि प्रातःकाल कौन जगाएगा? जो जागरण जीवन में आया है, अकेले में क्या वह जागृत रह सकेगा? हमारे दोष हमको कौन बताएगा? हमको पंक्तिबद्ध कौन खड़ा करेगा? हमको अनुशासित कौन रखेगा? अन्ततोगत्वा हमको आत्मानुशासन पर आना है, हमारा अपना शासन। अनुशासन का अर्थ होता है शासन के पीछे चलना। आज शासन किसका चल रहा है हमारे ऊपर? अभी तो मन का चल रहा है, बुद्धि का चल रहा है, कामनाओं का चल रहा है, वासनाओं का चल रहा है। हमें शासन आत्मा का स्थापित करना है।

काम, क्रोध, लोभ, मोह, मत्सर ये दुश्मन चारों ओर खड़े हैं। इनसे युद्ध करते हुए भगवान का स्मरण करें। जो बात यहाँ बताई जा रही है, वह भगवान ने बताई है। भगवान की बताई हुई बात को भगवान के इस काम में लगाना है, इसीलिए बार-बार कहा जा रहा है कि यह ईश्वरीय कार्य है। भगवान कृष्ण ने इस सांसारिक देह से विदाई के पूर्व यही कहा था कि जो मैंने किया वही तुम करो। वही संकल्प हम अपने मन में दोहराते हैं। वही लोगों के सामने प्रकट करते हैं। कभी रात को प्रकट करते हैं, कभी दिन को प्रकट करते हैं। लेकिन सावधान रहें अगर हमने अपने हृदय को अपने मन को, हमारी बुद्धि को उस परमेश्वर से बाँधा नहीं तो हम सब भूल सकते हैं, भटक सकते हैं। अर्जुन जैसा सिपाही कहता है कि हवा से भी तेज गति से चलने वाले इस मन को किस प्रकार से वश में किया जा सकता है? हम अर्जुन की तुलना में कुछ नहीं हैं पर अर्जुन ने हमारा ही तो प्रश्न पूछा है और अर्जुन के माध्यम से भगवान ने हमको जवाब दिया है। इस मन को वश में करने के लिये भगवान द्वारा बताए गये

उपाय अभ्यास को हम कर रहे हैं, यह सब आवश्यक है। जो यह अभ्यास नहीं करते और पंडित बने हुए व्यवसायिक रूप से प्रवचन करते हैं, उन लोगों की गति क्या जो जाती है? बहुत सारे लोग कितना कलुषित जीवन जीकर चले गये। लोगों को रुझाने का प्रयत्न करना बहुत उत्प्रेरित करता है। किन्तु स्वयं सुधरे बिना दूसरों को सुधारने का प्रयत्न करना कितना हास्यास्पद है? उन तथाकथित महात्माओं की भाँति हम भी अपने जीवन को कलुषित न कर दें। कोई कितना ही बड़ा उपदेशक बन जाए पर अन्दर से यदि खोखला है तो उस खोखलेपन को सद्‌चरित्र, सुसंस्कारों, सद्‌कर्म से भर देना आवश्यक है, यह हमने यहाँ जाना।

जब पहले दिन आए थे, उदास-उदास, थके-थके से चले आए। उस दिन अनजान बने हुए थे। इन दिनों में अभी तो थोड़ी पहचान हुई थी। अभी तो लगाव हुआ था, अभी तो अनुराग जगा था। अनुराग और राग के बिना कार्य प्रारम्भ नहीं होता। लेकिन यह राग लगाव है, जो सद्‌मार्ग पर नहीं ले जाता है, वह राग हमारा दुश्मन भी बन जाता है। यदि हम किसी से राग करते हैं तो किसी से द्वेष करने लग जाते हैं, तब हमारा जीवन कलुषित हो जाता है। अत: सावधान रहना है और अब जाते समय यही पीड़ा रहे कि अब आपको कौन सावधान करेगा? अब उठो, अब सोवो मत, उठ जाओ सूर्योदय होने वाला है, जीवन में एक जागरण होने वाला है, उसका सवेरा आने वाला है। थोड़ा परिश्रम करो, थोड़ा धीरज रखो, सब कुछ घटित होगा। यदि सो गए तो जैसी कहावत है कि 'सूतोड़े री भैंस पाडो लावे'। हमारे साथ भी वही होगा जो शिविर में न आने वालों के साथ होता है। यदि साधना और धीरज न रखा तो गफलत में जीवन बिताने वाले लोग हम भी बन सकते हैं। हम तो इस प्रकार के गये गुजरे जीवन से निकल कर श्रेष्ठ जीवन की ओर चलते रहें। भगवान कृष्ण की आज्ञा को माने जो उन्होंने गीता में कही है।

क्षत्रिय जाति कितनी श्रेष्ठ जाति है, जिसने इस संसार पर राज किया, कभी ध्यान से, कभी ज्ञान से, कभी सुशासन से। वह जाति आज ऐसी क्यों हो गई? यह बात पूज्य तनसिंहजी को खटकी, उसी दिन से जागरण हो गया। तब से लेकर जीवन पर्यन्त सोए नहीं। हम भी आगे बढना प्रारम्भ करें और इस संकल्प को लेकर चलें कि अब मैं जाग गया हूँ, अब कभी नहीं सोऊँगा। इस काम को जीवन भर करूंगा। जो भार कंधों पर लिया है, उसके विरुद्ध कितने भी लालच आ जाएँ, कितने ही प्रलोभन आ जाएँ, लोग डिगाने आ जाएँ, मित्र डिगाने आ जाएँ पर उसे जीवन भर करूंगा। अन्दर के मित्र भी हैं तो बाहर के मित्र भी हैं लेकिन इस कार्य के सम्बन्ध में किसकी बात माननी है, किसकी नहीं माननी यह निर्णय मुझे करना है, इस निर्णय के लिए नितान्त अकेला मैं जिम्मेवार रहूंगा। किंकर्तव्य विमूढ की भाँति क्या करूं, क्या नहीं करूं में जीवन न गंवा दें। साधुओं और संन्यासियों के पास जा जाकर लोग यह निर्णय नहीं कर पाते कि हनुमान जी को मानूं, माताजी को मानूं या शिवजी को मानूं, किसकी साधना करूं? जीवन बीत जाता है और तब तक भी यह पता नहीं चलता है कि मैं किसका उपासक हूँ। वस्तुत: हम उस परमात्मा के उपासक हैं जिसने इस संसार की रचना की है, रक्षा करता है। अगर यह बात समझ में आ जाए तो रोजाना कुछ समय बैठकर उस परमेश्वर को याद करें। यह बहुत बड़ी ताकत देता है, इसको ढकोसला मत समझना। रोजाना उठकर हम आधा घंटा दे सकते हैं। आधे घंटे तक भगवान का नाम लें, उनका स्मरण करें। क्षत्रिय युवक संघ का जो अष्ट सूत्री कार्यक्रम है उसे अपनाएँ। सूर्योदय से पहले उठकर अपने शरीर की शुद्धि करूंगा, बाहर की भीतर की। स्नान करके ईश्वर का स्मरण करूंगा। स्वाध्याय करूंगा। श्रम करूंगा। श्रम के पसीने की बूंदों के बिना कोई परिवर्तन संभव नहीं है। फिर मैं सेवा करूंगा। ऐसा श्रम जो दूसरों के काम आता हो और जिसमें मेरा कोई स्वार्थ नहीं हो, वही सेवा है, यह कभी नहीं भूलूंगा। मैं मनन करूंगा, मौन रहूंगा। बहुत अधिक बोलते हैं तो शक्ति का अपव्यय होता है। प्रतिदिन अभ्यास करें, घंटा आधा घंटा मनन करके उस कार्य को लिखूंगा।

क्या विकास हुआ मेरे अन्दर उसका आत्मदर्शन करूंगा। इस तरह से करते-करते पूरा दिन बीते और फिर रात को सोते समय फिर भगवान को याद करें कि मुझसे कुकर्म भी हो जाता है, भगवान! मैं इतना कमजोर हूँ कि आपकी सहायता के बिना आगे नहीं बढ पाऊँगा। मेरा मार्गदर्शन करते रहें।

हम जो खाते हैं-पीते हैं उससे रस बनता है, वीर्य बनता है, उसकी भी हम रक्षा नहीं कर पाते हैं। हम बहुत कमजोर हो गए हैं। जो वीर्य की रक्षा नहीं कर सकता वह ब्रह्मचारी नहीं बन सकता। जो ब्रह्मचारी नहीं बन सकता वह कभी भी किसी श्रेष्ठ उद्देश्य की प्राप्ति नहीं कर सकता। इसलिए वीर्य की रक्षा करें। अपने जीवन को कर्मशील बनाए रखें और परमेश्वर की सहायता माँगते रहें। तब हमारे ये आँसू कभी न छलकेंगे। अपने आप की तैयारी करके जाएँ और तैयारी को कभी भूलें नहीं। तनसिंहजी कहते हैं कि जाओ धूम मचा दो। लोगों को हमारे जीवन से प्रेराणा मिलनी चाहिए। हम संसार को श्रेष्ठ बनाने के लिये चल पड़े हैं। अपने कष्टों से पसीना बहाते, आने वाले कष्टों को सहकर भी कभी उफ तक नहीं करेंगे। ऐसे कर्मशील ही संसार को सुख और शान्ति प्रदान कर सकते हैं। लेकिन यदि भोगों में फँस गए तो कार्य नहीं हो सकेगा। कमाने की कोई मर्यादा नहीं है, खूब कमाओ लेकिन अपने ऊपर, अपने परिवार के ऊपर कम से कम, आवश्यक खर्च ही करो, बाकी सेवा में लगा दो। नौकरी करने की कोई मनाही नहीं है। नौकरी तो सबसे सरल काम है, सुविधा है। वह थोड़ी सहायता करती है, सुविधा करती है लेकिन उस सुविधा में हम खो सकते हैं। खोना नहीं है-चाहे नौकरी करो या व्यवसाय करो। विवाह करो लेकिन भाव यह रहे कि इस समाज के लिये, इस संसार के लिये, भगवान के लिये इन सुविधाओं को समझते हुए मैंने विवाह किया है। भगवान के संकल्प को पूरा करने के लिये, इस सृष्टि के विस्तार के लिये विवाह किया है, बस इतना ही। भोग में नहीं फंसना है।

जो हमने यहाँ पाया है उस सबकी पोटली बांधकर के ले जाओ और जो कुछ हमारे पास में गंदगी और मलिनता है वह यहीं छोड़कर जाएँ, यहीं उनका त्याग करके जाएँ। तब यह स्थान जहाँ हमने ग्यारह दिन बिताए हैं, तीर्थ स्थल बन जाएगा। तीर्थ स्थानों पर हम जाते हैं तो श्रेष्ठ चीजों को ग्रहण करते हैं, बुरी चीजों को छोड़ने का संकल्प करते हैं। यह संकल्प ही हमारे जीवन में आगे बढने की सतत् प्रेरणा देता रहेगा, हमारा जीवन कभी रुकेगा नहीं। तब यह गीत-**चलता रहे मेरा संघ, यही तो मेरा जीवन धन** गाकर कभी थकेंगे नहीं, कभी हारेंगे नहीं। जीवन भर चलते रहेंगे। वह संकल्प ही हमको इस संसार का अगुवा बनायेगा। आप नेता बनना चाहते हैं तो ऐसे नेता बनें। आप पैसे वाले बनना चाहते हैं तो समृद्धि अन्दर ही लाएँ। अन्दर की सारी दरिद्रता को मिटा दें। तब आप समृद्ध बन जाएँगे। आप व्यवसाय करना जानते हैं, वह आपका स्वभाव है तो ऐसा निर्णय करें कि वह संसार के काम आए, जिससे संसार की सेवा हो सके। ऐसा कोई श्रम करें, ऐसा त्याग करें जैसी बातें हमने यहाँ सुनी है। जो थोड़ी-थोड़ी उदासी आ रही है कि जो हमने पाया है उसे सुरक्षित रख सकेंगे क्या? हमने हमारे हृदय में जो ज्योत जगाई है, वह जब आंधियाँ आएंगी, हवाएँ चलेंगी, तूफान आएंगे तो कहीं बुझ न जाए। बस उस ज्योत में हमारे पसीने का तेल डालते रहना है। भावनाओं का तेल डालते रहना है। क्षत्रिय युवक संघ का स्मरण दीपक बन जाएगा और यह ज्योति जलती रहेगी। इससे हम प्रकाशित होंगे, संसार प्रकाशित होगा। क्षत्रिय युवक संघ की ओर से आप सबको विदा देते हुए मैं आपका नये स्वागत के लिये आह्वान करता हूँ। यह अन्तिम विदाई नहीं है, हम फिर मिलेंगे। भूली हुई बातों को फिर याद करेंगे। हिसाब करेंगे कि इतने दिनों में हमने क्या पाया, क्या खोया, अब हमको क्या करना है? फिर मिलेंगे, फिर विदाई होगी, फिर मिलेंगे। जिस तरह से जीवन की एक शृंखला है, उसी तरह शिविरों की एक शृंखला है। उस आगे वाले स्वागत के लिये मैं क्षत्रिय युवक संघ की ओर से माँ भगवती की प्रार्थना करके आप सबको विदाई देता हूँ।

गतांक से आगे

# पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में)

## ''जो कुछ देखा, समझा व अनुभव किया''

– चैनसिंह बैठवास

ईश्वर की इच्छा हुई, ''एको अहम् बहु श्याम'' एक से अनेक बनूं। ईश्वर के इस संकल्प के परिणाम स्वरूप सृष्टि का सृजन हुआ। विधि के विधान के अनुसार शादी, सन्तानोत्पत्ति यह सृष्टि चक्र है। सारा ब्रह्माण्ड इस सृष्टि चक्र का ही नतीजा है। परमात्मा के इस विधान से सृष्टि आबाद हो रही है। प्राणीमात्र विधि के इस विधान की ही देन है।

विधि के विधान के अनुसार हर घर के आँगन में पुष्प खिलते हैं और खिलते रहेंगे। हम सभी के घरों में भी पुष्प खिले हैं और खिलते रहेंगे। उन पुष्पों से यानी अपनी संतति से हमारा रागात्मक सम्बन्ध है, उनसे गहरा लगाव रहा है और सदैव रहेगा। पूज्य श्री तनसिंहजी के आँगन में जो पुष्प खिले, उनकी संतति के सम्बन्ध में हम जानना चाहेंगे। पूज्य श्री तनसिंहजी की संतति में दो पुत्रियाँ व दो पुत्र हैं। पुत्रियों में बालूकंवर व जड़ाव कंवर (जागृति कंवर) तथा पुत्रों में पृथ्वीसिंह व देवीसिंह। बालू कंवर ने रामपुरिया (मेवाड़) के श्री सरदारसिंह जी के पुत्र डॉक्टर हरीसिंहजी चुण्डावत की धर्म सहचरी और जड़ाव कंवर ने हरदास का बास (सीकर) के श्री सायरसिंह जी के पुत्र महावीरसिंह जी शेखावत की धर्म सहचरी बनकर उनके घरों को रोशन किया, उन्हें खुशहाली दी, प्रसन्नता दी। गुड़ला (मेवाड़) के श्री ओंकारसिंह जी चौहान की पुत्री विद्यांकवर, पृथ्वीसिंह के संग दाम्पत्य बन्धन में बंधकर तथा गुड़ा (पोंख) जिला झुन्झुनू के श्री सुमेरसिंह जी शेखावत की पुत्री मंजू कंवर देवीसिंह के संग दाम्पत्य बन्धन में बंधकर पूज्य श्री तनसिंहजी के आँगन की शोभा बनी, उनके आँगन को रोशन किया।

एक पिता अपनी संतति (संतान) के लिये वह सब करता है, जो उन्हें करना चाहिए। वह अपनी संतान का भला चाहता है, इसलिये उनका बेहतर ढंग से पालन-पोषण करता है, उन्हें अच्छी शिक्षा व अच्छे संस्कार देने में लगा रहता है तथा उनकी सुख और सुविधा का सदैव ध्यान रखता है। वह चाहता है कि उनकी संतान का लोक व परलोक सुधरे, इसी भाव को लेकर वह जीता है। हर पिता का अपनी संतान के प्रति यही सोच होता है। अब देखना यह है कि पूज्य श्री तनसिंहजी का अपने आँगन में पुष्पित व फलित होने वाली सन्तति (संतान) के प्रति सोच कैसा व क्या था? यह जानना चाहेंगे, तो जाने! उनकी जुबान से –

''मेरे घर के प्रफुल्लित पुष्प! तुम्हें मैं स्वस्थ, सुशिक्षित और सुसंस्कार सम्पन्न बनाना चाहता हूँ। मेरी इच्छा भले ही यह हो, कि हमारी बिरादरी की परम्परा अमर बनी रहे, किन्तु अपनी इच्छा को न आज तक किसी पर लादी है, और न लादना चाहता हूँ। योग्य बनकर तुम अपना मार्ग स्वयं ढूंढ लोगे और मेरा विश्वास ही नहीं, दृढ़ विश्वास है कि तुम नवज्योति के अग्रदूत बनोगे। इस समय तुम्हारी केवल यही इच्छा रहती है कि मैं तुम्हें प्रेम दूँ। तुम्हें खिलाकर खेलूँ, तुम्हारे लिये अपना समस्त प्रेम न्योछावर कर दूँ। मैं ऐसा पूर्णत: नहीं करूंगा क्योंकि तुम्हें जितनी आवश्यकता होगी, उसके अनुसार उतनी वस्तु तुम्हें हर समय मिलेगी। विश्वास रखो, मेरी ओर से प्राप्त होने वाली वस्तु के अभाव में तुम टूटकर गिरोगे नहीं। उससे पहले ही मैं तुम्हें सम्बल दूंगा, किन्तु मेरे सम्बल का यह उद्देश्य नहीं है कि तुम मेरे बल पर आश्रित रहकर स्वयं की शक्तियों को जाग्रत ही न करो। इसलिए समय और आवश्यकता के अनुसार अपने पैरों पर चलने और खड़े होने के लिए मैं अवश्य सहारा दूंगा। बड़े होने पर तुम्हारी यह इच्छा भी नहीं रहेगी कि तुम्हें सम्बल दूँ फिर भी मैं उसका संचय सदा के लिए नष्ट नहीं करूंगा।''

घर में बच्चे जब बड़े हो जाते हैं तो उनकी इच्छाएँ बढ सकती हैं, उनकी आवश्यकताओं में बढोतरी हो सकती है, और उनकी मान्यताओं में भी अन्तर आ सकता है तथा उनकी सोच और विचारधारा भी बदल सकती है। कुछ बच्चे अपने माता-पिता के विचारों और सोच वाले ही होते हैं, तो कुछ की विचारधारा और सोच विपरीत भी हो सकती है।

इस सम्बन्ध में पूज्य श्री तनसिंहजी ने अपने घर के प्रफुल्लित पुष्प (संतान) को सम्बोधित करके कहा –

''बड़े होने पर तुम्हारी इच्छायें बहुमुखी होंगी, तुम्हारी आवश्यकताएँ और मान्यताएँ भी बहुमुखी होंगी। हो सकता है कि तुम्हारी मान्यताएँ मेरी ही भाँति हो। उस अवस्था में चिन्ता की कोई बात नहीं है, तुम्हें मार्ग दर्शन और सहायता चारों ओर से मिलती रहेगी, किन्तु यदि तुम्हारी मान्यताएँ विपरीत होगी, तो आज ही मैं उन सबका उत्तर दे देना ठीक समझता हूँ। क्योंकि आज का उत्तर अधिक विश्वसनीय और प्रमाणित होगा।

''सबसे पहली बात तो तुम यह कहोगे कि मैंने तुम्हारे लिए उन साधनों का बाहुल्य नहीं जुटाया जो रहीसों को सहज ही उपलब्ध होता है। यह सही है, लेकिन साधनों का बाहुल्य होना ठीक भी नहीं है। साधन हीन भी होना ठीक नहीं है, किन्तु अपने परिश्रम के अंश को जीवित रखने के लिए कुछ अभावों का होना आवश्यक भी है। यदि मैं साधनों के दैन्य का सामना न करता तो आज मैं जो हूँ वह कभी भी नहीं बन सकता था। आर्त होना आवश्यक है। पीड़ित हुए बिना उठने और प्रगति करने की कोई इच्छा ही नहीं होगी। यहाँ तक कि आध्यात्मिक उपलब्धियों के लिये भी पीड़ित होना आवश्यक है। आर्त को भगवान ने भक्तों में प्रथम स्थान दिया है। शायद यह भी कहोगे कि दुनिया को स्वावलम्बन का उपदेश देकर स्वयं ने दारिद्र्य कैसे पाल लिया? मेरे पुष्प! तुम जब तक अपनी सुगन्ध नहीं बिखेरोगे, तब तक तुम्हारा खिलना और न खिलना बराबर है। तुम्हारा यह रूप देखा ही अनदेखा रह जाएगा, यदि गन्ध का अभाव ही रहा। भारतीय संस्कृति त्याग मूलक है। समय और त्याग का ही संचय करना हमारी संस्कृति में आध्यात्मिक प्रगति का बाधक बताया गया है। एक अवस्था ऐसी आयेगी, जब तुम्हें भी यही मानना पड़ेगा, कि संयम से बढकर समस्याओं का कोई भी सुलझा हुआ हल नहीं है। इसके अतिरिक्त इस दैन्य का दूसरा कारण भी है।

''अपने आपको मिटाये बिना अपने कन्धों पर दूसरे को उठाना असम्भव है। भोग और त्याग एक साथ नहीं चल सकते। व्यक्ति, कौम अथवा राष्ट्र को उठाने के लिए प्रारम्भ में कुछ लोगों को दारुण दुख भोगने पड़ते हैं। कुछ ऐसे रोड़ों की आवश्यकता रहती है, जो नींव में लगाए जावें। किसी कौम में क्रांति लाना हो, उसका दृष्टिकोण बदलना हो, तो उसकी नींव में त्याग भरना पड़ेगा। भोग वहाँ नहीं भरा जा सकता। यन्त्रणाओं की नींव पर सुख के महल खड़े होते हैं। बाहुल्य का प्रारम्भ अभावों की बुनियाद पर होता है। प्रदर्शित वस्तु की तह में नीचे और बहुत गहरे कुछ अप्रदर्शित तत्व रहते हैं, जिनकी ओर दुनिया का ध्यान ही नहीं जाता। गरीबों के शोषण से रहीसों के सुख पैदा होते हैं, इसीलिए हमें गरीब बनना पड़ा है कि तुम आने वाली पीढ़ी रहीस बनो। हमें वर्तमान के सुख को ठुकराना है, इसलिए नहीं कि सुख से हमें नफरत है, बल्कि इसलिए कि भविष्य का फल वर्तमान के पसीने से ही बना करता है। ये अभाव जिन्हें तुम देखते हो, हमारा त्याग नहीं, हमारा परिश्रम है, हमारा पसीना है।''

दूसरों पर निर्भर रहने वाला कभी स्वावलम्बी नहीं हो सकता। स्वावलम्बन की महत्ता तो स्वावलम्बी ही समझ सकता है। जीवन में संयम, त्याग व परिश्रम का अपना महत्त्व है, जिसे अनदेखा नहीं किया जा सकता। अपने आँगन की फुलवारी में खिले पुष्प को यही समझाने का प्रयास पूज्य श्री तनसिंहजी ने किया।

हो सकता है, आने वाली पीढ़ी को पूर्वजों की कही हुई बात रास न आये। उनका बताया रास्ता, उनका आदर्श भी उन्हें ढकोसला लगने लगे। इसलिए पूज्य श्री तनसिंहजी ने उन्हें आश्वस्त करने के साथ हिदायत देते हुए कहा–

''तुम शायद यह भी कहोगे, कि इतना दर्शन झाड़ने के बजाए यदि तुम मेरे लिए दस रुपये ही छोड़ जाते तो अच्छा था। दर्शन से पेट नहीं भरता, उससे पढाई नहीं होती, उससे प्यास नहीं मिटती। शायद तुम यह कहोगे, कि मैंने अपने साथ सैंकड़ों लोगों का जीवन बर्बाद कर दिया। इस दुनिया में अयोग्य और बेकार के आदर्शवादी लोगों की जमात खड़ी कर दी। यह सही है, कि ये आदर्श रुपयों के मोल नहीं बिकते और न ये रुपयों से खरीदे जाते हैं किन्तु इनकी एक अलग कीमत है। तुम हम लोगों पर रहम बिल्कुल मत करो। हमने जो कुछ किया उसके सब पहलुओं

**(शेष पृष्ठ 12 पर)**

# श्री आयुवानसिंह एक महान व्यक्तित्व

– शिवबक्षसिंह चुई

जन्म दिनांक 17.10.1920 को और स्वर्गवास दिनांक 7.1.1967 को, अपने जीवनकाल के मात्र 47 वर्ष में उन्होंने राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया जो कौम के इतिहास में अमर रहेगा।

**भविष्य द्रष्टा** – वर्तमान में सामाजिक, राजनैतिक व सांस्कृतिक क्षेत्र में हम जो क्रिया कलाप करते हैं, उसका भविष्य क्या है? इसकी सफल विवेचना और विश्लेषण जो पू. आयुवानसिंहजी ने प्रस्तुत किया वह राजपूत इतिहास की एक विशेष धरोहर बन चुका है। स्वतंत्र भारत में जो राजपूत राजनैतिक क्षेत्र में उतरे उससे वर्तमान और भविष्य का चित्रण उन्होंने अपनी पुस्तक 'राजपूत और भविष्य' में किया है। उनके अनुसार–

भूतकाल–गौरवशाली

वर्तमान–संघर्षमय

भविष्य–उज्ज्वल

उज्ज्वल भविष्य के सम्बन्ध में जो उनकी विवेचना है, उससे लगता है कोई ज्योतिषी भविष्य की परतें खोल रहा है। सारे संसार के इतिहास में से अगर भारतवर्ष का इतिहास निकाल दें तो केवल दो–तीन हजार का भौतिक उन्नति का इतिहास मात्र रह जाता है। और अगर भारतवर्ष के इतिहास में से क्षत्रियों का इतिहास निकाल दें तो केवल ऋषि मुनियों का आध्यात्मिक इतिहास ही शेष रह जाता है। तात्पर्य यह है कि जीवन के सभी क्षेत्रों में संसार का जो गौरवशाली और प्रेरणादायी इतिहास है वह केवल क्षत्रिय इतिहास ही है।

उत्थान के बाद पतन और पतन के बाद पुनः उत्थान सृष्टि का क्रम है, वही क्रम राजपूत इतिहास का है। वर्तमान में समाज के सामने क्या–क्या समस्याएँ हैं, क्या समस्याएँ आ सकती हैं और उनका समाधान क्या है, इन्हीं सभी बातों पर उक्त पुस्तक में विवेचन किया गया है। घोर अंधेरी रात्रि के पश्चात प्रभात और सूर्योदय ध्रुव–निश्चित है। ठीक उसी प्रकार वर्तमान के पतन के काल के पश्चात् राजपूत कौम का उत्थान ध्रुव–निश्चित है। भगवान श्री राम के रामराज्य से लेकर हर्षवर्धन तक का लाखों वर्षों का लम्बा इतिहास इस बात का ज्वलंत उदाहरण है।

भविष्य की संभावित घटनाओं का समाधान उनके अनुसार केवल बौद्धिक कौशल से ही नहीं, पुरुषार्थ और शस्त्रधारण से हो सकेगा। इसे समय की माँग मानकर उन्होंने पंचसूत्र कार्यक्रम दिया। क्षत्रिय युवक संघ की विचार–क्रांति मात्र विचार क्रांति ही नहीं, वह सम्पूर्ण जीवन के समस्त आयामों को प्रभावित करने वाला जीवनदर्शन है। भविष्य राजपूत कौम से क्या अपेक्षा करता है, इसको भी आयुवानसिंह जी ने अपने साहित्य के माध्यम से भलीभाँति स्पष्ट कर दिया है।

समाज जागरण, चेतना और विचार क्रांति व समाज के नव निर्माण सम्बन्धी साहित्य आपके अलावा पू. श्री तनसिंहजी को छोड़कर गत दो हजार साल के लम्बे समय में और किसी ने नहीं लिखा। 'श्री आयुवानसिंहजी एक विकट व्यक्तित्व' नाम से एक लेख पू. तनसिंहजी रचित संघशक्ति में मैंने पढा था। उस विकट व्यक्तित्व और जुझारू योद्धा की गाड़ी सही पटरी पर लाने का सहयोग पू. तनसिंहजी से मिला। अपनी डायरी लेखन में पू. तनसिंहजी ने एक जगह लिखा है कि क्षत्रिय युवक संघ के इतिहास में बौद्धिक क्षेत्र में सर्वाधिक सहयोग श्री आयुवानसिंहजी का मिला।

कुछ वर्षों पूर्व ऋषिकेश में संघ का एक दंपती शिविर लगा, उसके विदाई समारोह में स्वामी रामसुखदास जी महाराज ने एक सहयोगी के साथ अपना संदेश भेजा। संदेश था–आने वाले समय में यह इस्लामी आतंकवाद दिल्ली का घेरा कड़ा करेगा, तब ये अन्य संगठन देश की रक्षा नहीं कर पाएंगे, क्षत्रिय ही रक्षा कर पाएंगे, क्षत्रिय युवक संघ को इसकी तैयारी करनी चाहिए। स्वामी रामसुखदासजी महाराज ने यह बात चाहे किसी संदर्भ में कही हो किन्तु यह बात भी आयुवानसिंहजी के विचारों से समानता रखती है कि कर्मठता तथा कुशल शस्त्र संचालन द्वारा ही क्षत्रिय भविष्य में निर्णायक भूमिका निभा सकेगा।

**इतिहासकार–** ब्रिटिश काल में शिक्षा के क्षेत्र में

राजपूत इतिहास को कितना तोड़ा-मरोड़ा गया, उसे दूषित करने का प्रयास किया गया, यह बात इतिहास में जानकारी रखनेवाला भलीभाँति जानता है। भारतीय इतिहास के संदर्भ में राजपूत इतिहास को वास्तविक रूप से जनमानस के सामने लाने का कुछ इतिहासकारों ने महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। उनमें श्री आयुवानसिंहजी प्रमुख थे। इतिहास का गहन अध्ययन कर राजपूतों द्वारा की गई भूलों पर एक पुस्तक लिखी 'हमारी ऐतिहासिक भूलें'। उद्देश्य था कि हमारी पराजय और हमारे पराभव का कारण ये भूलें बनी अत: उन भूलों का अध्याय हमें सदा सर्वदा के लिए बन्द कर देना चाहिए। करना क्या चाहिए, वह भी स्पष्ट किया।

उनकी 'ममता और कर्तव्य' नामक पुस्तक में अंधेरे में पड़ी ऐतिहासिक घटनाओं को उजागर कर-समाज के सामने रखा जो भूषण भूत सम्यक कृति-संस्कृति बल्कि राजपूत संस्कृति के नाम से जानी जाती है। राजपूत इतिहास की उन सुनहरी घटनाओं को संजोकर सामने रखा जिसमें त्याग, बलिदान, मातृभूमि से प्रेम, मान बिन्दुओं की रक्षा और स्वजातीय तथा स्वराष्ट्र प्रेम से ओतप्रोत हैं।

वे राजनीति, समाजशास्त्र, इतिहास और संस्कृति के विद्वान थे, उन सबका निचोड़ उनकी 'मेरी साधना' पुस्तक में मिलेगा, जो सदैव हमें साधना पथ पर प्रेरित करती रहेगी। उसका एक-एक अवतरण प्रेरणास्पद और शिक्षाप्रद है। समर्पण की भावना का प्रतीक है। पुस्तक के अंत में समाज पुरुष के सामने पूर्ण समर्थन की भावना प्रकट हुई है। अगर कभी जीवन में निराशा, उलझन या असमंजसता पैदा हो जाए तो उस अवतरण को पढने से नव स्फूर्ति, चेतना और जागृति का जोश आएगा। पूर्ण समर्पण समाज देवता के चरणों में, गीता के कृष्ण के चरणों में।

**पृष्ठ 10 का शेष**

## पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में)

पर विचार करके किया है। रहम करके तुम हमारी बहादुरों की मौत को छोटा बना देते हो। हम बहादुरों का जीवन जिये हैं और बहादुरों की मौत मरे हैं, या मरेंगे। तुम शायद मेरी इन पंक्तियों को पढ भी सकोगे या नहीं, तुम जिस दिन पढने और उसका अर्थ समझने लायक होंगे, उस समय शायद यह पत्रिका और उसके यह पृष्ट किसी के पास रहेंगे या नहीं, कह नहीं सकता, किन्तु इतनी आवाज तो हमारी सदैव गूंजती रहेगी, कि हमने असहाय मानवता की सेवा में अपने सभी सुखों को न्योछावर कर दिया। हमारी नजरों में हमारे लिए हमदर्दी बताने वालों के आँसुओं और आग्रहों से कहीं अधिक भव्य और शानदार था हमारे जीवन का लक्ष्य। उनके और हमारे मिशन में मौलिक अन्तर था। हम दुनिया की घिसी पिटी राह पर कोल्हू के बैल की तरह सिर नीचा किये प्रगतिशीलता और जमाने के नाम पर जीने की कायरता को अंगीकार नहीं कर सके। इस राह के पथिक मिट जायेंगे किन्तु राहें नहीं मिटेगी और न मिटेंगे चरण-चाहे उन पर समय की कितनी ही आँधी अपना जोर अजमाये।

''हमने अपने जीवन में पैसे का उचित मूल्य किया है, किन्तु धन को अपना सर्वस्व नहीं बनाया। हम निर्धन जरूर थे। हम इन्सानियत की भीख मांगते-मांगते मर गये, किन्तु हमारी माँगे पूरी हों उससे पहले ही उसका जनाजा उठ चुका था। हम निर्धन थे-उदीयमान कौम के भाग्य निर्माताओं के हृदय की धड़कनों के, किन्तु हमारी झोली फट चुकी थी और उधर उन भाग्य निर्माताओं के हृदय में तमन्नाओं का दिवाला निकल चुका था। हम फिर आयेंगे, बार-बार जन्म लेकर इस मिशन को पूरा करेंगे, यह विश्वास रखो।

''यह तो हुआ हमारे विफल होने का अंजाम। हो सकता है, हम अपने स्वप्नों को सत्य कर सकें। यदि ऐसा हुआ तो तुम्हारे बड़े होने पर लोग यह पंक्तियाँ तुम्हें अवश्य पढने के लिए देंगे पर ध्यान रखना, ये सफलतायें केवल हमारी ही थी, उनसे लाभ उठाने की तुम चेष्टा न करना। तुम्हारा हक केवल उन सफलताओं पर है, जिन्हें तुम स्वयं अर्जित करो। हमारा कहना यदि मानो, तो उन सफलताओं के सुख का भी त्याग करना। त्याग का सुख चाहे कितना ही छलना से भरा हुआ दिखाई देता हो, किन्तु उसमें एक ऐसी महानता होती है, जिसका कोई जवाब नहीं। फिर तुम जानो और तुम्हारा काम।''

**(क्रमश:)**

# भारतीय संस्कृति के प्राण मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम

– स्वामी धर्मबन्धु

**प्रस्तावना :–** वर्तमान समय के वैज्ञानिकों के शोध के अनुसार वे इस पृथ्वी की आयु 4.543 अरब वर्ष बिग बैंग थ्योरी के आधार पर मानते हैं, परन्तु अधिकांश वैज्ञानिक बिगबैंगथ्योरी को कपोल कल्पित भी मानते हैं। आधुनिक विद्वान लोग मानव सभ्यता को लगभग 6000से 21000 वर्ष पुराना मानते हैं, परन्तु वैदिक काल गणना के अनुसार पृथ्वी की आयु 1972949521 वर्ष अभी तक पूर्ण हुई और मानवीय सभ्यता Human civilisation को 1960853121 वर्ष की मानते हैं। संपूर्ण भारत वर्ष में कोई भी शुभ कार्य जब पण्डित लोग कराते हैं, तो संकल्प पाठ में इस काल की गणना को अवश्य बोलते हैं। इस पृथ्वी का निर्माण कब हुआ? मानव सभ्यता का प्रादुर्भाव कब से प्रारम्भ हुआ? यह विद्वानों के लिये अभी भी शोध का विषय है। परन्तु जब से मानव सभ्यता का अस्तित्व प्रारम्भ हुआ तो उसमें अनेक संस्कृतियों और साम्राज्यों का उद्‌भव हुआ जिसमें अनेक संस्कृतियों, सभ्यताओं और साम्राज्यों का अस्तित्व समाप्त भी हो गया। जैसे ग्रीस, इजिप्सियन, रोमन, मंगोलियन, पर्सियन इत्यादि। 621 ई. में इस्लाम ने इजिप्ट पर आक्रमण किया 642 ई. में वहाँ की सभ्यता को मिटाकर उसे इस्लाम में परिवर्तित कर दिया, 635 ई. में इस्लाम ने ईरान और ईराक पर आक्रमण किया, और 650 ई. में ईरान और 652 ई. में ईराक को मुस्लिक राज्य बना दिया। 329 ई. में रोम के सम्राट Constantine the Great कांस्टेटाइन अपनी माँ के साथ येरुसलेम (Jerusalem) आये और वहाँ पर उन्होंने ईसाईयत धर्म की दीक्षा धारण की। तत्पश्चात् 50 वर्ष के भीतर संपूर्ण यूरोप ने ईसाई मत को स्वीकार कर लिया। परन्तु भारतीय संस्कृति और सभ्यता को मिटाने के लिए 13 बार विदेशियों द्वारा आक्रमण किया गया जिसका विवरण इस प्रकार है –

(1) 460 BC. में पर्सियन लोगों के द्वारा भारत वर्ष पर आक्रमण किया गया। (2) 4 जून 327 BC. को Alexander the great सिकन्दर के द्वारा भारत पर आक्रमण हुआ। (3) 100 BC. में यूची. यानी कुषाण लोगों के द्वारा आक्रमण। (4) 79 ई. में शक लोगों ने आक्रमण किया। (5) 535 ई. में हूण लोगों ने आक्रमण किया। (6) 650 ई. में अरब लोगों ने आक्रमण किया।

इन 6 आक्रमणों में हमारी संस्कृति, सभ्यता और देश की सीमाएँ अराकान से खुरासान तक, कैलाश से कोलम्बो तक सुरक्षित रही।

(7) 20 जून 712 ई. में मोहम्मद बिन कासिम ने सिन्ध पर आक्रमण किया वहाँ पर भारतीयों की प्रथम पराजय हुई। (8) 1026 ई. में महमूद गजनबी का आक्रमण गुजरात के सोमनाथ मंदिर पर हुआ, भारत वहाँ भी पराजित हुआ। (9) 1192 में मोहम्मद गौरी का आक्रमण हुआ और सम्राट पृथ्वीराज चौहान की हार हुई। (10) 1526 में बाबर ने 15000 सैनिक और 17 तोपों के द्वारा भारत पर आक्रमण किया और मुगल साम्राज्य की नींव रखी। (11) 1498 ई. में पुर्तगाली लोग भारत में आये और 1509 में दीव और 1510 में गोवा को अपने अधीन कर लिया। (12) 5–6 सितम्बर 1746 में फ्रेंच यानी फ्रांस ने मद्रास पर आक्रमण किया और 15 वर्ष के संघर्ष के बाद 26 जनवरी 1761 ई. में पांडिचेरी को अपने नियंत्रण में कर पाये। (13) तेरहवाँ आक्रमण अंग्रेजों ने किया। 1601 ई. में ईस्टइंडिया कम्पनी के माध्यम से अंग्रेज लोग भारत में व्यापार करने आये, यहाँ की सुख समृद्धि को देखकर और राजनीतिक अस्थिरता को समझकर, उन लोगों की मानसिकता में भारत पर राज करने की प्रबल इच्छा उत्पन्न हुई। 1757 ई. में पलासी के युद्ध के बाद भारत के कुछ भू–भाग को अपने नियंत्रण में अवश्य कर लिया, परन्तु संपूर्ण भारत पर उन लोगों का अधिकार 28 जून 1858 ई. से 14 अगस्त 1947 तक ही रहा। इसके लिये अंग्रेजी हुकूमत को 101 वर्षों तक संघर्ष करना पड़ा था।

उपर्युक्त तथ्यों को लिखने का आशय हमारा यह है कि 21 वर्ष में इजिप्ट, 15 वर्ष में ईरान, 17 वर्ष में ईराक 50, वर्ष में यूरोप, ने अपनी संस्कृति सभ्यता को खो दिया, लेकिन भारत वर्ष में ऐसी क्या विशेषता थी, जो इतने आक्रमणों और अत्याचारों के बावजूद भी उसका अस्तित्व आज तक विद्यमान हैं? यदि भारत देश से निकलकर अफगानिस्तान, पाकिस्तान और बांग्लादेश तीन इस्लामिक राष्ट्र बन भी गये तो भारत वर्ष से निकलकर नेपाल, श्रीलंका और म्यांमार भारतीय सभ्यता और संस्कृति के समर्थक राष्ट्र बने। यदि भारतीय भूमि पर इस्लाम और ईसाई संस्कृति अपना प्रभाव जमाने में कामयाब हुई, तो जापान, वियतनाम, भूटान, थाईलैंड, कोरिया, कम्बोडिया इत्यादि देश पर भारतीय संस्कृति और सभ्यता की अमिट छाप देखी जा सकती है। **भारतीय संस्कृति और सभ्यता के अस्तित्व को पुष्पित एवं पल्लवित करने में मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम और उनके वंशजों का अद्भुत योगदान रहा है।** बौद्धधर्म संस्थापक भगवान बुद्ध, जैनधर्म के सभी भगवान, सिख धर्म के संस्थापक गुरुनानक देव जी ये सभी क्षत्रिय थे जो भगवान श्री राम के ही वंशज थे। इन लोगों ने अज्ञानता के कारण उत्पन्न अंधश्रद्धा, अंधविश्वास और कुरीतियों से दु:खी होकर वैदिक व्यवस्था से विपरीत नए मत सम्प्रदाय की रचना की थी। अत: मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम भारतीय संस्कृति और सभ्यता के प्राण हैं। श्रीराम के बिना भारतीय राष्ट्र की परिकल्पना निराधार है। श्रीराम के काल से लेकर आज तक श्रेष्ठ राज्य को रामराज्य की उपमा दी जाती है। इसलिए हमने मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम तथा उनके नैतिक आदर्श और सर्वश्रेष्ठ राज्य व्यवस्था का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। इस तथ्य को हमने 3 भागों में विभक्त किया है।

## भाग-1

### 1. मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीरामचन्द्र जी का परिचय

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र जी ने भारतवर्ष (आर्यावर्त) के अयोध्या राज्य में सूर्य वंश के अन्तर्गत इक्ष्वाकु वंश में महारानी कौशल्या और महाराज दशरथ के यहाँ त्रेता युग के अन्तिम चरण में चैत्र मास शुक्ल पक्ष नवमी तिथि पुनर्वसु नक्षत्र में जन्म लिया था। उनकी बाल्यकाल की शिक्षा महर्षि वशिष्ठ के गुरुकुल में सम्पन्न हुई। 16 वर्ष से 25 वर्ष की आयुपर्यन्त उनकी शिक्षा महर्षि विश्वामित्र के सान्निध्य में संपूर्ण हुई। 25 वर्ष की आयु में 18 वर्ष की राजकुमारी महाराज जनक की सुपुत्री सुश्री सीता से विवाह हुआ। 25 वर्ष से 37 वर्ष की आयु तक सभी राजकुमार अपने परिवार और प्रजा के साथ आदर्शमय जीवन अपने राज्य में व्यतीत करते रहे, किन्तु 37 वर्ष की आयु में महाराज दशरथ ने श्रीराम का राज्याभिषेक करना चाहा तो महारानी कैकेयी के वरदान के कारण उनको राज सिंहासन के स्थान पर 14 वर्ष का वनवास प्राप्त हुआ। उन्होंने माता-पिता की इच्छानुसार अपनी धर्मपत्नी और भाई लक्ष्मण के साथ वन में निवास के लिए प्रसन्नतापूर्वक प्रस्थान किया। वनवास के दरम्यान अनेक कष्टों को सहन करके, ऋषि महर्षियों से ज्ञान और उनके अनुभवों से शिक्षा ग्रहण करते हुए, असंख्य आततायियों का वध भी किया। उसी दौरान उनकी धर्मपत्नी सीता का लंका के राजा रावण द्वारा हरण किया गया। तत्पश्चात् श्रीराम ने सुग्रीव आदि से मित्रता करके समुद्र पर पुल बनाकर लंका पहुँचे और युद्ध में रावण को परास्त किया। वनवास की अवधि समाप्त होने पर अयोध्या वापस आए वहाँ उनका 51 वर्ष की आयु में राज्याभिषेक हुआ और उन्होंने लगभग 30 वर्ष 1 मास 20 दिन तक अयोध्या पर शासन किया। तदुपरान्त वंश परम्परा के अनुसार तपस्या के लिये वनगमन किया।

### 2. श्रीरामचन्द्र के जीवन में गुण धर्म और स्वभाव का महत्त्व

श्रीराम के शील, स्वभाव और गुणों का परिचय कराते हुए महर्षि बाल्मीकि जी लिखते हैं-

**धर्मज्ञ सत्यसन्धश्च प्रजानां च हिते रत:।**
**यशस्वी ज्ञान सम्पन्न शुचिर्वश्य: समाधिमान्।।**

(व.रा.बा, सर्ग 1/12)

**अर्थात्–** मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम जी–धर्मज्ञ=धर्म को विधिवत रूप से जानने वाले, सत्यप्रतिज्ञ=सत्य को धारण करने वाले, प्रजा के हित व कल्याण के लिए निरंतर प्रयत्न करने वाले, यशस्वी=उनका यश और कीर्ति सभी दिशाओं में व्याप्त था, ज्ञानसम्पन्नः=वे संपूर्ण विद्याओं से सुशोभित थे, वह निरंतर अपने शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा को पवित्र रखते थे, वश्यः=वे अपने संपूर्ण इन्द्रियों को नियंत्रित रखते थे और नित्यप्रति समाधि लगाया करते थे।

**धर्मज्ञ सत्यसंवश्च शीलवाननसूयकः।**
**क्षान्तः शान्त्वयिता श्लक्ष्णः कृतज्ञो विजितेन्द्रियः।।**

(अयो, सर्ग 2/13)

**अर्थात्–** वे धर्मज्ञ,= धर्म को धारण करने वाले, सत्य का आचरण करने वाले शीलवान, किसी के प्रति ईर्ष्या न करने वाले, सहनशीलता स्वभाव यानी पृथिवी के समान क्षमा करने वाले, सबको सान्त्वना देने वाले, सभी के प्रति कोमलता का भाव रखने वाले, कृतज्ञ यानी उपकार को न भूलने वाले और जितेन्द्रिय अर्थात् कानों से सुनकर, हाथों से छूकर, आँखों से देखकर, नाक से सूँघकर मुँह से खाकर वे न प्रसन्न होते थे और न दुःखी होते थे।

**मृदुश्च स्थिरचित्तश्च सदा भव्योऽनसूयकः।**
**प्रियवादी च भूतानां सत्यवादी च राघवः।।**

(वा.रा. अयो. सर्ग 2/32)

**अर्थात्–** वे बड़े ही मृदु= सौम्य स्वभाव के, स्थिरचित्त= चित्त की वृत्तियों को संयमित रखने वाले, सदा सुन्दर तथा मनोहर दिखने वाले, किसी के प्रति ईर्ष्या न करने वाले, मधुर भाषण यानी सत्य और प्रिय शब्दों का उपयोग सभी के प्रति करने वाले थे।

**स च नित्यं प्रशान्तात्मा मृदुपूर्वं च भाषते।**
**उच्यमानोऽपि पुरुषं नोत्तरं प्रतिपद्यते।।**

(वा.रा. अयो, सर्ग 1/10)

**अर्थात्–** वे शान्तचित्त श्रीराम सदा मधुर वाणी में वार्तालाप करते थे और किसी के कठोर प्रश्न का उत्तर अशिष्टता से नहीं देते थे।

वे नित्य कर्म संध्या वंदना समय पर करते थे, महर्षि बाल्मीकि जी इसके विषय में लिखते हैं–

**कौशल्या सुप्रजा राम पूर्वा संध्या प्रवर्तते।**
**उत्तिष्ठ नरशार्दूल कर्तव्यं दैव माह्मीकम्।।**

(वा.रा.बा. सर्ग 2/32)

**अर्थात्–** जब प्रातःकाल हुआ तो तब महामुनि विश्वामित्र ने पर्णशैय्या पर सोये हुए राम से कहा हे कौशल्या के सुयोग्य पुत्र राम! हे नरशार्दूल! उठो, यह प्रातःकालीन संध्या का समय है। और शौचादि क्रिया से निवृत्त होकर, देव यानी ईश्वर का ध्यान करो और अग्निहोत्र अर्थात् यज्ञ करो।

**तस्यर्षेः परमोदारं वचः श्रुत्वा नृपात्मजौ।**
**स्नात्वा कृतोदकौ वीरौ जेपतुः परमं जपम्।।**

(वा.रा.बा. सर्ग 2/3)

**अर्थात्–** महर्षि के उदार तथा प्रिय वचन सुनकर राम लक्ष्मण उठे। उन्होंने स्नान करके सूर्य को अर्घ्य दिया और गायत्री मंत्र का जप किया।

श्रीराम के योग्यता और पराक्रम के बारे में महर्षि लिखते हैं–

**राजविद्याविनीतश्च ब्राह्मणानामुपासकः।**
**ज्ञानवान् शीलसम्पन्नो विनीतश्च परंतपः।।**

**अर्थात्–** श्रीराम ने राजनीति की विद्या में विशेष रूप से ज्ञान प्राप्त किया था।वे ज्ञान विज्ञान में पारंगत तथा ब्राह्मणों यानी चरित्रवान ज्ञानियों के उपासक अथवा प्रशंसक और सुशील, विनय संपन्न एवं परम तपस्वी थे।

**यजुर्वेदविनीतश्च वेदविद्भिः सुपूजितः।**
**धनुर्वेदे च वेदे च वेडाङ्गेषु च निष्ठितः।।**

**अर्थात्–** श्रीराम ने यजुर्वेद के ज्ञान को विशेष रूप से प्राप्त किया था, वे वेद विद्वानों के द्वारा भी पूजनीय थे, तथा धनुर्वेद और चारों वेद एवं वेदाङ्गों के पारंगत विद्वान थे।

**बभूव भूयो भूतानां स्वयंभूरिव समस्तः।**
**सर्वे वेद विदः शूराः सर्वे लोकहिते रताः।।**

**अर्थात्–** श्रीराम ही नहीं अपितु वे चारों राजकुमार ब्रह्मा के समान विद्वान, शूरवीर, पराक्रमी और सभी प्राणियों के प्रति कल्याण की भावना रखने वाले थे।

श्रीराम ही नहीं यद्यपि उनके परम भक्त हनुमान भी परम विद्वान थे। किष्किन्धा में हनुमान जी का अपने भाई लक्ष्मण से परिचय कराते हुए श्रीराम कहते हैं–

**नानृग्वेदविनीतस्य नायजुर्वेद धारिणः।**
**नासामवेदविदुषः शक्यमेवं प्रभाषितुम्।।**

(वा.रा. किष्कि, सर्ग 3/28)

**अर्थात्–** जिसने ऋग्वेद की शिक्षा न प्राप्त की हो, जिसे यजुर्वेद का ज्ञान न हो और जो सामवेद का विद्वान न हो, वह ऐसी ज्ञानपूर्वक वार्तालाप नहीं कर सकता।

**नूनं व्याकरणं कृत्स्नमनेन बहुधा श्रुतम्।**
**बहु व्याहरतानेन न किंचिदपशब्दितम्।।**

(वा.रा. किर्थिक सर्ग 3/20)

**अर्थात्–** ऐसा प्रतीत होता है कि इन्होंने व्याकरण शास्त्र का भलीभाँति अध्ययन किया है। यही कारण है कि इनके साथ अत्यधिक वार्तालाप करने पर भी इन्होंने व्याकरण सम्बन्धी कोई गलती नहीं की।

## 3. भगवान श्रीराम के नैतिक आदर्श

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम जब अपने पिता से वनगमन की ओर प्रस्थान करने की आज्ञा लेने उनके पास पहुँचे, तो महाराज दशरथ ने श्रीराम से कहा–

**अहं राघव कैकेय्या वरदानेन मोहितः।**
**अयोध्यायां त्वमेवाद्य भव राजा निग्रहय माम्।।**

**अर्थात्–** हे मेरे प्रिय राम! मैं रानी कैकेयी को वरदान देकर उसमें फँस गया हूँ। अतः तुम मुझे बन्दी बनाकर कारागार में डाल दो, और तुम आज ही अयोध्या के राजा बन जाओ।

पिता जी की ऐसी आज्ञा सुनकर, श्रीराम ने उनसे हाथ जोड़कर विनम्रतापूर्वक उत्तर दिया–

**भवान् वर्षसहस्राय पृथिव्या नृपते पतिः।**
**अहं त्वरण्ये वत्स्यामि न मे राजस्य कांक्षिता।।**

**अर्थात्–** हे पूज्य पिता जी! आप सहस्रों वर्ष तक राजा बनकर इस पृथ्वी पर शासन करें। मैं तो अब वन में जाकर ही निवास करूंगा, मुझे राज्य की कोई आकांक्षा नहीं है।

प्रभु श्रीराम के जीवन का आदर्श भारतीय संस्कृति का देदीप्यमान चित्रण है। अब जरा श्रीराम के मन्दिर तोड़वाने वाले बाबर के वंशजों की तस्वीर देखिए। मुगल सम्राट औरंगजेब ने दिल्ली का राज्य हथियाने के लिए अपने भाइयों की नृशंस हत्या की और अपने पिता को बन्दी बनाकर जेल में डाल दिया। वहाँ भी उसे अनेक कष्ट दिए। इस घटना का उल्लेख सभी इतिहासकारों ने किया है। परन्तु आकिल खाँ ने अपने ग्रन्थ ''वाक आत आलमगीरी'' में इस घटना का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। जिसमें शाहजहाँ का अपने पुत्र के नाम एक पत्र भी उद्धृत किया है। उसमें उन्होंने लिखा था–

**ऐ पिसर तू अजब मुसलमानी,**
**कि ज़िन्दा जानम ब। आब तरसानी।**
**आफ़्रींबाद हिन्दुवान सद बार,**
**में देहन्द पिदरे मुर्दारा वा दाइम आब।।**

**अर्थात्–** हे पुत्र! तूं विचित्र मुसलमान है जो अपने जीवित पिता को पानी के लिए तरसा रहा है, शत शत बार प्रशंसनीय है वो हिन्दू जो अपने मृत पिता को भी जल देते हैं यानी श्राद्ध तर्पण करते हैं।

## 4. श्रीराम के जीवन से हम क्या सीख सकते हैं

1. अपना आँसू खुद पोंछो दूसरे पोंछेंगे तो सौदा करेंगे, जैसे सुग्रीव ने पहले अपना खोया हुआ राज्य और पत्नी को प्राप्त किया, उसके पश्चात श्रीराम की सहायता के लिए प्रस्तुत हुआ। उसी प्रकार विभीषण सम्मानित जीवन और राज्य का प्रलोभन पाने के बाद, श्रीराम की सहायता हेतु तत्पर हुआ।
2. अपनी मुश्किलों का सामना करने की क्षमता स्वयं में पैदा करो, परिवार और रिश्तेदार की सहायता मत लो नहीं तो ये लोग पूरा जीवन उपहास करेंगे। जैसे राम ने अयोध्या और जनक से अपनी मुश्किल दूर करने के लिए कोई सहायता नहीं ली।
3. अधर्म और अनीति की बुनियाद पर साम्राज्य स्थापित मत करो क्योंकि इनकी दीवारें कमजोर

होती हैं। इसलिए सत्य तथा धर्म के मार्ग पर चलकर शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक और आध्यात्मिक रूप से सामर्थ्यवान बनो, क्योंकि शक्तिशाली व्यक्ति से ही लोग प्रेम करते हैं।

4. आदर्श प्रस्थापित करने के लिए सर्वस्व त्याग के लिए तत्पर रहो और समाज में प्रत्येक वर्ग तथा व्यक्ति की अहमियत को समझो, किसी की उपेक्षा मत करो अपितु उनका उपयोग करो। जैसे राम ने सभी वर्गों से सहयोग प्राप्त किया।

5. राष्ट्र, पिता-पुत्र का आदर्श, भाई-भाई के प्रति समर्पण का भाव, पति-पत्नी का प्रेम और शासक तथा प्रजा का धर्म यानी कर्तव्य पालन हेतु, सत्य और निष्ठा के साथ त्याग तथा बलिदान के लिए तत्पर रहना।

इत्यादि आदर्शों को अपने जीवन में धारण करना ही श्रीराम की अनुपम भक्ति है।

### भाग-2

## धर्मात्मा श्रीराम के राज्य में शासन व्यवस्था का दिग्दर्शन

भारतवर्ष के महान समाज सुधारक विश्वविख्यात राजनेता राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जी की भारत देश में रामराज्य प्रस्थापित करने की प्रबल अभिलाषा थी। रामराज्य का वास्तविक स्वरूप क्या था? उसका कुछ दिग्दर्शन प्रस्तुत करने का हम प्रयत्न करते हैं। रामराज्य की महिमा का वर्णन महर्षि वाल्मीकि जी अपने द्वारा लिखित रामायण में इस प्रकार करते हैं-

**निर्दस्युरभवल्लोको नानार्थं कश्चिदस्पृशत्।**
**न च स्म वृद्धा बालानां प्रेतकार्याणि कुर्वते।।**
**सर्वं मुदितमेवासीत् सर्वो धर्मपरोऽभवत्।**
**राममेवानुपश्यन्तो नाभ्यहिंसन् परस्परम्।।**
**नित्यमूला नित्य फलास्तरवस्र पुष्पिता:।**
**कामवर्षी च पर्जन्य: सुखस्पर्शश्च मारुत:।।**
**ब्राह्मणा: क्षत्रिया वैश्या: शूद्रा लोभविवर्जिता:।**
**स्वकर्मसु प्रवर्तन्ते तुष्टा: स्वैरैव कर्मभि:।।**
**नाल्पसंनिचय: कश्चिदासीत् तस्मिन्पुरोत्तमे।**
**कुटुम्बी यो ह्यसिद्धार्थोऽ गवाश्वधनधान्यवान्।।**
**कामी वा न कदर्यो वा नृशंस: पुरुष: क्वचित्।**
**द्रष्टुंशक्यमयोध्यायां नाविद्वान् न च नास्तिक:।।**
**सर्वे नराश्च नार्यश्च धर्मशाला सुसंयता:।**
**मुदिता: शीलवृत्ताभ्यां महर्षय इवामला:।।**
**नाषडङ्गविदत्रास्ति नाव्रतो नासहस्रद:।**
**न दीन: क्षिप्तचित्तो वा व्यथितोवापि कश्चन:।।**

**अर्थात्-** रामराज्य में डाकू और चोरों का भय नहीं था, दूसरे के धन को लेना तो दूर, कोई छूता तक भी नहीं था, वृद्ध लोग बालकों का प्रेत कार्य नहीं करते थे अर्थात् कुपोषण के कारण बालमृत्यु नहीं होती थी। सभी नागरिक हर्षोल्लास से परिपूर्ण रहते थे, वे सभी धार्मिक भाव के साथ नैतिकतापूर्ण जीवन व्यतीत करते थे। राज्य के नागरिकों का श्रीराम के प्रति आकर्षण रहता था और वे सभी श्रीराम का श्रद्धापूर्वक आदर करते थे, वे लोग परस्पर एक दूसरे के प्रति हिंसा का भाव नहीं रखते थे।

रामराज्य में कन्दमूल और फल खूब होते थे वृक्ष सदा समय पर फूलते और फलते रहते थे, यथासमय वृष्टि होती थी और सदा सुखस्पर्शी वायु चला करती थी।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इनमें कोई भी वर्ग लोभी नहीं होता था सभी वर्ग के लोग अपना कार्य करते हुए, अपने धन धान्य और सामर्थ्य से संतुष्ट रहते थे।

रामराज्य में कोई ऐसा परिवार नहीं था जो थोड़े संग्रह वाला यानी गरीब हो अर्थात् प्रत्येक के पास पर्याप्त धन तथा संसाधन था, कोई ऐसा गृहस्थी नहीं था, जिसकी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति न होती हो और ऐसा भी कोई घर नहीं था जो गौ, अश्व, धन और धान्य से परिपूर्ण न था।

अयोध्या के नागरिक वहाँ की नैतिक शिक्षा और दण्ड विधान के कारण प्राय: कामवासना में आसक्त नहीं होते थे, वहाँ के व्यक्ति कंजूस (miser) भी नहीं थे, दान देना यानी परोपकार ही उन लोगों की प्रकृति थी। क्रूर, मूर्ख और नास्तिक (ईश्वर, वेद और पुनर्जन्म में विश्वास

न रखने वाला) व्यक्ति तो अयोध्या में दिखाई ही नहीं देता था। सभी स्त्री, पुरुष धर्मात्मा, इन्द्रियों को वश में रखने वाले, सदा प्रसन्न रहने वाले तथा शील और सदाचार की दृष्टि से महर्षियों के समान निर्मल थे।

वहाँ कोई ऐसा व्यक्ति भी नहीं था जो शिक्षा, कल्प, ज्योतिष, व्याकरण, निरुक्त और छन्द सहित वेदों के ज्ञान को न जानता हो। कोई व्यक्ति उत्तम आचरण से रहित नहीं था। सभी महाविद्वान व ज्ञानी थे, उनमें कोई भी निर्धन नहीं था, जिसे शारीरिक या मानसिक पीड़ा हो ऐसे भी नागरिकों का सर्वथा अभाव था।

रामराज्य के परिदृश्य को गोस्वामी तुलसीदास जी ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है।

**दैहिक दैविक भौतिक तापा। रामराज नहि काहुहि व्यापा।**
**सब नर करहिं परस्पर प्रीति। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीति।।**
**अल्पमृत्यु नहीं कवनिउ पीरा। सब सुन्दर सब बिरुज शरीरा।।**
**नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना। नहिं कोउ अबुध न लक्षन हीना।।**

महाराज श्रीरामचन्द्र जी की आदर्श राज्य व्यवस्था आगे के समय तक भी पर्याप्त रूप से चलती रही, महाराज अश्वपति ने अपने राज्य के सम्बन्ध में गर्वपूर्वक घोषणा इस प्रकार की थी-

**न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यपः।**
**नानाहिताग्निर्नाविद्वान् न स्वैरी स्वैरिणी कुलः।।**

(छाँदोग्योनिषद्)

- मेरे राज्य में कोई व्यक्ति चोर नहीं है अर्थात् सभी नागरिकों के पास उनके जीवन-यापन के लिए पर्याप्त धन सम्पत्ति है। चरित्र से युक्त शिक्षा के कारण कोई कंजूस नहीं है, कोई शराबी भी नहीं है। कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जो प्रतिदिन अग्निहोत्र यानी यज्ञ न करता हो और शिक्षा की व्यापकता के कारण कोई मूर्ख भी नहीं है। धर्म और कर्तव्य के आत्मबोध के कारण कोई व्यभिचारी पुरुष नहीं है, तो फिर भला व्यभिचारिणी स्त्री हो ही कैसे सकती है।

राज्य की ऐसी श्रेष्ठ व्यवस्था का प्रबन्ध मंत्रियों के द्वारा होता है। भारतवर्ष के मंत्री कैसे होते थे इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण हमें ''मुद्राराक्षस'' नामक पुस्तक में प्राप्त होता है। आइए सम्राट चंद्रगुप्त के प्रधानमंत्री आचार्य चाणक्य की कुटी का दर्शन करते हैं।

**उपलशकलमेतद् भेदकं गोमयानां,**
**वटुभिरुपहृतानां बर्हिषां स्तूपमेतत्।**
**शरणमपि समिद्भिः शुष्यमाणभिराभिः,**
**विनमितपटलान्तं दृश्यते जीर्णकुड्यम्।।**

- एक ओर गोबर के उपलों को तोड़ने के लिए पत्थर का टुकड़ा पड़ा हुआ है, दूसरी ओर शिष्यों द्वारा लाई हुई कुशाओं का ढेर लगा हुआ है। पुरानी दीवार की छत पर जलाने के लिए लकड़ियाँ सुखाई गई हैं। जिससे छत का सिरा झुका हुआ है। **(क्रमशः)**

---

इस सृष्टि में पूर्ण स्वतंत्र तो केवल ईश्वर है और इसीलिए वह सर्वमान्य है। स्वतंत्रता का सर्वाधिक राग अलापने वाला मानव या तो अपनी सुखेच्छा का गुलाम है या उससे बड़ा है तो किसी वैज्ञानिक युक्ति या विचार का गुलाम है। बुराई की गुलामी छोड़कर हम अच्छाई के गुलाम बनते हैं। यही मानवता की शिक्षा है। हमारे पास विकल्प केवल इतना ही है कि किसकी दासता स्वीकार करें। संस्कृति और सभ्यता ने अच्छाई को अंगीकार करने की बात सिखाई है। इस प्रक्रिया में सभ्यता और संस्कृति का विकास हुआ है, पर पूर्ण स्वतंत्रता का दावा निरर्थक है। पूर्ण स्वतंत्र तो केवल ईश्वर है।

**- पू. तनसिंहजी**

गतांक से आगे

# मेरी साधना

लेखक – पू. आयुवानसिंहजी, गुजराती भाष्य–श्री बलवंतसिंह पांची, हिन्दी अनुवाद–प्रोफेसर रूपसिंह लिम्बड़ी

## अवतरण–49

**मैंने साधना के विकट मार्ग पर स्तब्ध होकर चारों ओर अपने शत्रु और मित्रों को देखा। आशा और निराशा, उत्साह और शिथिलता के सम्मिलित वातावरण से अनुप्राणित हो कर्म–पथ पर पैर बढाया। मानस–प्रदेश पर एक उत्तेजक गुदगुदी–सी हुई। गर्वित नेत्रों ने देखा–राह पर कोई आकर खड़ा हो गया था, पहचाना–मेरा चिरपरिचित मित्र अहं था। पूछ बैठा–''कहो भाई?''**

**''मैं तुम्हारे साथ ही रहना चाहता हूँ''–उत्तर मिला।**

आशा और उत्साह जितावे जंग।
निराशा और शिथिलता डिगावे डग।।

किसी भी नये क्षेत्र में कार्य का प्रारम्भ करने के पूर्व प्रत्येक व्यक्ति सोचता है कि इस कार्यक्रम में कौन सहायक बनेगा और कौन बाधक होगा। उसी प्रकार यहाँ साधक साधना के विकट मार्ग पर स्थिर होकर चारों तरफ अपने इर्द–गिर्द दृष्टि डालता है। मेरे कार्य में कौन शत्रु हैं, कौन मित्र है, उसकी कसौटी करता है। साधक सामाजिक साधना के क्षेत्र में कदम रखते आशा और उत्साह एवं भीतर ही भीतर निराशा और शिथिलता का अनुभव करता है। प्रेरक, सहयोगी, आशा–उत्साह के साथ निराशा और शिथिलता के सम्मिलित वातावरण से अनुप्राणित होकर अपने कर्म–पथ पर कदम रखता है।

जब कोई निष्ठावान और निस्वार्थी व्यक्ति सामाजिक साधना के क्षेत्र में प्रवेश करता है, तो उसके मन में उत्साह, उत्तेजना और आनन्द की बाढ–सी आती है। उस वक्त उसके पैर धरती पर नहीं टिकते हैं, वह हवा में उड़ने लगता है। उसकी वह आकाशी उड़ान उसे सामाजिक क्षेत्र में सफलता की चोटी पर पहुँचने का साहस एवं सामर्थ्य जगाती है।

वह साहस और उत्साह उसमें 'समाज को बदल डालो' की भावना जगाते हैं। फिर वह समाज को जगाने के, समाज को संगठित करने के सपनों में रममाण रहता है। उसके दिल में स्वाभिमान और गर्व की ज्वार उठती है। अपनी जाति का इतिहास, अपने पूर्वजों के पराक्रम, परोपकार एवं पवित्र कार्यों की स्मृति उसमें समर्पण के भाव जगाती है। वह अपनी पूरी शक्ति और विशेषताओं को समाज की थाती (अमानत) मानता है। और उसका पूरा–पूरा उपयोग समाज के हित में करने का दृढ–संकल्प करके अपना पूरा जीवन समाज को अर्पित कर देता है।

उपर्युक्त भावों को आकण्ठ भरकर साधक अपने गर्विष्ठ नेत्रों से अपने मार्ग पर दृष्टिपात करता है। उसे अपने समक्ष कोई खड़ा दिखायी देता है। साधक उसे पहचान लेता है। यह तो मेरा चिर–परिचित मित्र 'अहम्' है। यहाँ साधक 'अहम्' का अपने चिर–परिचित मित्र के रूप में परिचय करवाता है। पहचान देता है। इस बात को हमें गंभीरता से, गहराई से समझने की आवश्यकता है। प्रत्येक साधारण आदमी अहम् को अपना मित्र ही मानता है। लेकिन जो व्यक्ति समाज के लिए साधना का प्रारम्भ करता है, उसमें प्रगति करता है, तब उसे अहम् मित्र नहीं, अपितु अपनी राह का कण्टक दिखाई देता है। और तब वह कांटे को हटाने के लिए जागृत हो जाता है, क्योंकि तब साधक साधना क्षेत्र की प्रगति के गुण–दोष और हानि–लाभ का ज्ञान प्राप्त कर चुका है।

सामान्यतया हमारा समाज अहम् जैसे शत्रु को अपना हितैषी मित्र मानकर उसका लालन–पालन एवं पोषण किया करता है। अहम् को समाज का ही नहीं, अपने व्यक्तिगत हित का भी शत्रु मानकर, समझ कर साधना मार्ग में उसका विवेक आगे बढना चाहिए।

साधक अब अहम् को चिर–परिचित मित्र नहीं किन्तु समाज का शत्रु मानता है, इसलिए तिरस्कार से पूछा है–यहाँ क्यों आए हो? अहम् उत्तर देता है–मैं आपके

साथ रहना चाहता हूँ। अहम् किन रूपों में साथ रहना चाहता है, यह हम अगले अवतरण में देखेंगे। अभी तो हमें अर्थात् क्षत्रिय समाज को अपने शत्रु-मित्र की पहचान करने की परमात्मा हमें शक्ति प्रदान करें, यही प्रार्थना।

**अर्क–** क्या करूं क्या न करूं भीतर है मन्थन।
चोटी पर जाने का साहस उत्साह भरता है।।

## अवतरण–50

**दो शत्रुओं का द्वन्द्व चल रहा है मेरे अन्तर्जगत में। एक की उपस्थिति के लिये दूसरे का अभाव आवश्यक है। साधना के पथ पर समर्पण-भावना को निमंत्रित करूंगा तो बहिर्गमन करना पड़ेगा कर्तव्य की भावना को। इस कर्तव्य का परिपोषक है मेरे अन्तः का अहम्। वही छद्मवेषी अहं जो अब तक प्रकट में मित्रता का अभिनय कर रहा था। अब उस अहं का संपूर्ण विसर्जन होगा, पहचान गया मैं उस धूर्त को।**

बिना समर्पण के साधना अपूर्ण।
अकेले कर्तव्य कर्म से न होती पूर्ण।।

साधक के भीतर द्वन्द्व चल रहा है। यह द्वन्द्व दो शत्रुओं के बीच का है। दोनों परस्पर के शत्रु हैं। ये दोनों हैं-समर्पणभाव और कर्तृत्व भाव। वैसे तो दोनों ही अच्छे मालूम होते हैं, फिर भी दोनों में बहुत फर्क है। वह फर्क हमारी दृष्टि में नहीं आता है, परन्तु साधक इन दोनों के भेद को आसानी से समझ जाता है। इसलिए वह कहता है कि यदि मैं समर्पणभाव को निमंत्रित करूं तो कर्तृत्व भाव को जाना पड़ेगा। मुझे कर्तृत्व भाव का त्याग करना पड़ेगा।

यह बात जन-जीवन के सामाजिक, धार्मिक एवं राष्ट्रीय क्षेत्र में काम करने वाले कार्यकर्ताओं, संतों-महंतों तथा राष्ट्र सेवकों को गंभीरता से समझने की आवश्यकता है। कर्तृत्व भाव का पोषक है-अहम्। समर्पण भाव में राष्ट्र हित के लिये अपने आपको मिटा देना है।

अपने समाज के लिये अपना पूरा जीवन अर्पित करने वाले गुजरात-राजस्थान और राष्ट्रीय स्तर के कुछ पुण्यश्लोक पुरुषों के नाम शायद हमें समाज के लिये समर्पित होने की प्रेरणा दे सकते हैं। सामाजिक क्षेत्र में गुजरात के स्व. हरभमजी राज साहब, स्व. भाडवा दरबार साहब, स्व. हरिसिंह जी गढुला, स्व. मनुभा बापू चेर एवं राजस्थान के स्व. तनसिंहजी तथा स्व. आयुवानसिंहजी तथा राष्ट्रीय स्तर के स्व. भगतसिंह, स्व. चन्द्रशेखर, स्व. रामप्रसाद बिस्मिल और शहीदों का इतिहास जानें तो सम्भव है हमारे अन्दर भी थोड़ा बहुत समर्पण भाव जागृत हो जाए, समाज के लिए, राष्ट्र के लिये समर्पित होने की प्रेरणा मिले।

जैसे एक म्यान में दो तलवारें नहीं रह पाती हैं, उसी प्रकार समर्पण भाव और कर्तृत्व भाव दोनों एक साथ नहीं रह सकते हैं। एक की उपस्थिति के लिए दूसरे की अनुपस्थिति को साधक आवश्यक मानता है। क्यों? साधक कहता है कर्तृत्व के भाव का पोषक 'अहम्' है। अहम्भाव से किये गये कर्म व्यक्ति के लिए, राष्ट्र के लिए या समाज के लिए हितकर नहीं होते हैं। अहम् और स्वार्थ सहोदर हैं। जहाँ एक की उपस्थिति होती है वहाँ दूसरे की उपस्थिति अनिवार्य रूप से होती ही है। अहम् पोषित कार्यों से न तो समाज का हित होता है, न राष्ट्र का। साधक इस बात को बराबर समझता है। इसलिए वह कर्तृत्व के पोषक अहम् को डांटता है, वह कहता है-'आज दिन तक तू मित्रता का दावा करके मुझे छलता रहा, अब मैं तुम्हारे कपट (छलना) को पहचान गया हूँ। मैं समझ गया हूँ। अब तो तेरा संपूर्ण विसर्जन करना ही होगा।''

इस कपटी अहम् के संपूर्ण विसर्जन की बात हमारे लिए बोधदायक एवं प्रेरणादायक है। यदि हम गहराई से, गंभीरता पूर्वक सोचें तो यह बात हमें अपने अहम् से मुक्त होने का विचार करने को मजबूर करेगी। इसका जवाब कौन देगा? मैं, आप, समाज या समाज के कार्यकर्ता? जवाब नहीं मिलता। कारण? एक शेर की पंक्ति है –

बड़ा मुश्किल है संतुलन करना।
मुझसे मेरा मैं बहुत बड़ा है।।

हमारे समाज को तितर-बितर करने वाला, असंगठित रखने वाला जो सबल तत्व है, वह है हमारा व्यक्तिभाव, व्यक्तिगत अहंकार। ऐसा नहीं है कि हम इस

बात को समझते नहीं हैं। समझते हुए भी हम इस अहंकार को छोड़ नहीं सकते हैं क्योंकि इससे हमारा नाता, सम्बन्ध इतना प्रगाढ हो गया है कि इसके कारण ही हमारे जीवन में रस है, आनन्द है, इस भ्रम में हम जी रहे हैं। इससे साधक की तरह अपने अहम् को संपूर्ण विसर्जित करने का विचार ही नहीं, कल्पना भी नहीं कर सकते हैं।

हमारी जाति के इस महाभयंकर शत्रु का सर्वथा नाश करने का सरल एवं सहज एक उपाय उपलब्ध है। यह उपाय बताने में मेरे मन में एक भय है, आप मेरी बात सुनने समझने और उसको अपनाने (आचरण करने) की बजाए मेरी बात का उपहास करेंगे। फिर भी अपने आत्मबल को मजबूत करके उपाय बताने का साहस करता हूँ।

यदि हम अपनी भावी पीढी को इस शत्रु से मुक्त करना अपने हित की बात मानते हैं तो फिर अपने बच्चों को, अपने युवकों को, अपनी बालिकाओं को 'क्षत्रिय युवक संघ' के शिविरों में सम्मिलित करें। उन शिविरों में सामुहिक संस्कारमयी कर्म पद्धति से केवल अहम ही नहीं अपितु स्वार्थ, द्वेष, ईर्ष्या आदि से मुक्त होने की शिक्षा मिलती है। यदि हमारी नई पीढी इन शत्रुओं के बन्धन से मुक्त होगी तो हमारे उज्ज्वल भविष्य के लिए परमात्मा से आशीर्वाद प्राप्त होंगे। यदि ऐसा हुआ तो स्व. पू. तनसिंहजी के गीत की यह पंक्ति सार्थक होगी, -

**इस बस्ती में मस्ती छाई**
**अरे! कौम के भाग्य में अब तो आया नया प्रभात।**

नये प्रभात के चिंतन के लिए परमशक्ति हमें सूझ-बूझ और सामर्थ्य प्रदान करे।

**अर्क** – बिना वैर भाव के (धर्म हेतु) संहार करें, बिना कामवृत्ति के प्रेम करें। बिना सत्ता लालसा के विजय प्राप्त कर सिंहासन की तृष्णा रहित भाव से राज्य प्राप्त करना है।

## अवतरण–51

**अरे अहम्! स्वाभिमान की शरण में क्यों चला गया तू? इसीलिए कि वह तेरा सहोदर है। स्वाभिमान का तो रक्षण, वर्द्धन और पोषण करूंगा मैं। नाश तो केवल तेरा ही होगा, कारण कि तू मेरे साधना–पथ का रोड़ा है। तो बन्द कर दूं आज से तेरा भोजन,–निन्दा और स्तुति को और लग जाऊं तेरी करने ताड़ना। यही उचित उपाय है तुझ से छुटकारा पाने का। सावधान!**

अहंकार को अलग करके सजे स्वाभिमान।
राष्ट्र धर्म का गौरव ही सच्चा स्वाभिमान।।

गत अवतरण में हमने देखा कि अहम् साधक के साथ रहने की माँग करता है। इसके उत्तर में साधक इस अवतरण का प्रारम्भ करता है–अरे! अहम् स्वाभिमान की शरण में क्यों चला गया तू। अहम् और स्वाभिमान सगे (सहोदर) भाई हैं। व्यक्तिभाव के साथ अहम् समाज का शत्रु है। किन्तु जब यही अहम् सामाजिक रूप में प्रकट होता है तो वह स्वाभिमान बन जाता है। इसे समझना बहुत ही कठिन है, क्योंकि इन दोनों में बहुत ही सूक्ष्म भेद रेखा है।

साधक के लिये सामाजिक स्वाभिमान का बहुत बड़ा मूल्य है। इसलिए वह कहता है कि–स्वाभिमान की तो मैं रक्षा, वृद्धि और पोषण करूंगा, सिर्फ तेरा ही मैं नाश करूंगा। सामाजिक विकास, प्रगति एवं जागृति में बाधक–अवरोधक और विरोधी तत्त्व को सामाजिक शत्रु मानकर उसका विसर्जन करने को कहता है। साधक जिसका विसर्जन करने की बात करता है, समाज का बड़ा हिस्सा (समाज के अधिकांश लोग) स्वाभिमान के आभास (भ्रम) में इसका पोषण करने की गौरवपूर्वक गलती करते हैं। गलत मान्यता अथवा समझ के कारण स्वाभिमान का रूप लेकर प्रकट होने वाले अहम् की रक्षा, वृद्धि तथा पोषण करते हैं। इससे व्यक्ति के साथ समाज एवं राष्ट्र का नुकसान होता है। इस बात का हमारे समाज को अपने इतिहास की घटनाओं से पूरा परिचय है।

साधक अहम् के विसर्जन का उपाय दिखाता है। वह कहता है-तेरा भोजन निंदा और स्तुति मैं आज से बन्द करता हूँ। निन्दा और स्तुति अहं के पोषक तत्त्व हैं। अत: किसी की निन्दा और स्तुति बन्द करें। निन्दा और

स्तुति करना समाज का साधारण-सहज स्वभाव हो गया है। निन्दा और स्तुति बातचीत का सामान्य विषय बन गया है। हमें निन्दा और स्तुति बहुत पसंद है। इससे पर होना बहुत कठिन है। पुराणों में मधु-कैटभ की कथा है। यह कथा एक रूपक है। मधु और कैटभ को राक्षस कहा गया है। वास्तव में ये कोई राक्षस नहीं हैं। मधु माने स्तुति और कैटभ माने निन्दा। स्तुति में प्रशंसा होती है, निन्दा में टीका होती है। प्रशंसा मीठी लगती है, निन्दा कटु लगती है। ये दोनों हमारे लिये अहितकारी हैं। इसलिए हमें इन दोनों से ऊपर होना है, दोनों से मुक्त होना है। तब जाकर अहम् का भोजन बन्द किया जा सकता है। कठिन लगता है न? सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में अपना परिचय देना बहुत सरल है। सामाजिक कार्यकर्ता का व्यवहार बहुत ऊँचा होता है, कठिन होता है। सच्चे और अच्छे सामाजिक कार्यकर्ता होने के लिये साधना करनी पड़ती है। मान-अपमान, स्तुति-निन्दा, यश-अपयश, अपने-पराये की भावना से ऊपर उठना होता है। ऐसे स्वभाव और सम्यक दृष्टिवंत कार्यकर्ता होने के लिए 'मेरी साधना' सामाजिक दोषों एवं समाज के लिये अहितकर तत्त्वों को चुन-चुनकर हमारे समक्ष प्रस्तुत करती है। और उनसे दूरी रखने के उपाय भी दिखाती है। समाज के लिए हानि करने वाले दोषों और दूषणों को देखने के लिऐ सर्वप्रथम हमारे भीतर 'जाति भाव' जागृत होना चाहिए और वह प्रबल होना चाहिए। यही कार्य 'क्षत्रिय युवक संघ', 'मेरी साधना' पुस्तिका के माध्यम से कर रहा है।

अन्त में साधक कहता है-आज से तुझे डांटना शुरू करता हूँ। यही तुझसे छुटकारा (मुक्ति) पाने का उचित उपाय है। सावधान! पहले उसका (अहम् का) भोजन निन्दा-स्तुति से पर होने की बात करके अब डांटने की बात है। कौनसी डांट, किस प्रकार की डांट? ऐसा प्रश्न होना सहज है। इसका उत्तर कोरे कागज पर काले अक्षरों द्वारा नहीं मिल सकता है। उसके लिए तो पाठशाला में अभ्यास करने के लिए जाना पड़े। पाठशाला का अभ्यासक्रम तो बहुत ही सरल है। निशुल्क है, परन्तु हमारे पास पाठशाला में जाने के समय का अभाव है। हमारा मन फायदावादी है। हमें अपने समय का नकद मूल्य चाहिए। जहाँ नकद मूल्य न मिलता हो, ऐसी पाठशाला में जाने से क्या लाभ? इस प्रकार फायदेमंद मानसिकता के कारण हम ऐसी ही प्रवृतियों को महत्त्व देते हैं, प्रधानता देते हैं जिनसे पूरे नकद मूल्य प्राप्त होने की सम्भावना हो। प्रत्यक्ष लाभ दिखाई देने वाली प्रवृत्तियाँ ही हमें समाज हितकारी और समाज के लिए उपयोगी लगती हैं। अपना लाभ न हो ऐसी प्रवृति हम करते हों, ऐसा कम दिखाई देता है। समाज के हित के लिए कार्य करने वाले कार्यकर्ताओं के मन में यदि यह बात बैठ जाए तो समाज की सूरत बदलने का कठिन काम सरल हो जाए।

अब साधक आगे के अवतरण में समाज के अन्य शत्रुओं का परिचय करायेंगे। समाज के शत्रुओं को हम सही पहचान लें और उनसे मुक्ति पाने के लिए सच्ची समझ और शक्ति दें ऐसी परमशक्ति से हमारी प्रार्थना है।

**अर्क-** जो शरणागति स्वीकार करता है वह शूद्र, जो समाधान करता है वह वैश्य, जो संघर्ष करता है वह है क्षत्रिय और वाद-विवाद को संवाद में बदल दे वह है ब्राह्मण।

चिंतन मोती-यदि अपना कार्य आप रस एवं निष्ठा से करते हैं, तो आपको थकान का अनुभव नहीं होगा। इसलिए थकान से बचने का सही उपाय है अपना काम रसपूर्वक निष्ठा से करना चाहिए।

## अवतरण-52

**स्वार्थ मेरी साधना का विकट शत्रु है। यह मेरे मस्तिष्क के सम्यक संतुलन को डिगायमान कर, मेरी अन्तःप्रकृति की क्षुद्र वृत्तियों को उत्तेजित करता है, मुझे अहं के निम्न धरातल से ऊपर उठने नहीं देता। इसके वशीभूत हो, मैं क्षुद्राकांक्षाओं की पूर्ति के लिए छटपटाने लग जाता हूँ। तब जीवन के महान् आदर्श मेरा बहिष्कार कर देते हैं, आत्मा का सत्व रुष्ट हो जाता है, मैं ध्येयच्युत आदर्श-बहिष्कृत और समाज विमुख हो जाता हूँ।**

टूटे लक्ष्मण रेखा स्वार्थ की, सुर बने असुर।
ध्येय आदर्श छोड़ के बने भष्मासुर।।

पिछले तीन अवतरणों में साधक ने हमारे समाज के शत्रु 'अहम्' का परिचय करवाया और उससे सावधान करने की तथा उसके त्याग करने की समझ भी दी। अब इस अवतरण में समाज के दूसरे भयंकर शत्रु 'स्वार्थ' से सावधान रहने की चेतावनी और सलाह देने के साथ-साथ स्वार्थ के द्वारा होती रहती व्यक्तिगत एवं सामाजिक हानि का चित्र प्रस्तुत किया गया है। स्वार्थ और अहम् ये दोनों शब्द परिचित हैं। अपने जीवन व्यवहार में हमें कदम-कदम पर इसका अनुभव होता है। स्वार्थ, अहम्, लोभ तथा भोग एक ही परिवार के सदस्य हैं। इस परिवार को हमारे समाज में स्थायीत्व प्राप्त करने की अनुकूलता मिल गयी है। शत्रु-मित्र की कसौटी किए बिना ही इनको अपने मित्र ही नहीं, परम मित्र मान लिया है और हम इनका पालन, पोषण और वर्द्धन करते रहे हैं। बहुत ही दीर्घकाल से इन शत्रुओं को मित्र मानने की हमारी आदत हो गई है।

इतिहास की कई घटनाएँ इसका प्रमाण देती हैं कि स्वार्थ और अहम् के कारण हमारी बहुत बड़ी हानि हुई है। इतना ही नहीं, वर्तमान में भी कुछ घटनाएँ ऐसी हैं जिसके कारण आज भी हमारे समाज को बहुत बड़ा नुकसान और हानि पहुँच रही है। इसका दुख और पीड़ा हम मौन होकर सहन कर लेते हैं और कालान्तर में उन्हें भूल भी जाते हैं। किन्तु कभी भी इस समाज ने इन शत्रुओं से जंग छेड़ने का बीड़ा नहीं उठाया है।

साधक इन शत्रुओं के विरुद्ध जंग छेड़कर इनको परास्त करने की पूरी-पूरी श्रद्धा के साथ साधना पथ पर अग्रसर हो रहा है। साधक के कदमों पर चलने से पहले हमें अपने शत्रु-मित्र की परख (पहचान) करने के लिए पूर्व इतिहास और वर्तमान इतिहास का अध्ययन करना चाहिए। उसके हानि-लाभ का प्रमाण नाप कर 'क्या पाया क्या खोया' का हिसाब करके, व्यक्तिगत स्वार्थ को एक ओर करके उसका अंदाज लगाना पड़ेगा। फिर लाभ-हानि को तोलकर हमारे समाज के ये परम मित्र यदि समाज के लिये घातक दुश्मन-शत्रु प्रमाणित होते हैं तो हमें इन्हें शत्रु मानकर दफना देना चाहिए।

स्वार्थ के असर और उसके परिणाम को समझाते हुए साधक कहता है-स्वार्थ के कारण मनुष्य अपना मानसिक संतुलन खो बैठता है। बहुत ही अल्प एवं छोटी-छोटी बातों में अपने अन्त:करण की क्षुद्र वृत्तियाँ उत्तेजित हो उठती हैं। स्वार्थ ही आदमी को अहं की पकड़ से मुक्त नहीं होने देता है। स्वार्थ के वश होकर मनुष्य तुच्छ-बेकार की चीजों के लिए भी न जाने क्या-क्या कर बैठता है। स्वार्थमय जीवन के कारण उसके महान् गुण उसका त्याग कर देते हैं। उसके समक्ष कोई आदर्श भी नहीं होता है। अपना आत्म-सत्य भी उससे रूठ जाता है। स्वार्थी व्यक्ति का आदर्श केवल अपने स्वार्थ में रहता है। स्वार्थ को ही वह अपना सर्वस्व मानता है।

ऐसा स्वार्थी व्यक्ति समाज का विरोधी हो जाता है। अपने निजी हित व स्वार्थ के लिए वह समाज को छोड़ देने में क्षोभ, शर्म या लज्जा अथवा छोटेपन का भी अनुभव नहीं करता है। ऐसे स्वार्थी लोगों के कारण क्षत्रिय समाज को बहुत सहन करना पड़ा है। बहुत गंवाया है। इसका प्रमाण, इन दो-तीन उदाहरणों से, उसकी भयंकरता हमें उस पर विचार करने के लिए बाध्य कर सकती है।

महाभारत के विध्वंशक युद्ध का कारण है दुर्योधन की स्वार्थ परायणता। पृथ्वीराज चौहान के पतन का कारण है उसी का रिश्तेदार सरहदी। आज भी निजी स्वार्थ के कारण समाज को हानि पहुँचाने वाली घटनाएँ होती रहती हैं।

समाज के ऐसे भयंकर शत्रु के पकड़ से छूटने के लिए साधना, त्याग तथा बलिदान के अभ्यास एवं जातीय भाव की प्रबलता की आवश्यकता है। ये सब 'श्री क्षत्रिय युवक संघ' की पाठशालाओं में सामुहिक संस्कारमयी कार्य पद्धति द्वारा जगाया जा रहा है। अपनी जाति को सबल बनाने और जाग्रत करने की भावना वालों को सप्रेम निमंत्रित किया जाता है।

**अर्क-** अपने आपको महत्त्व देने का एक दुष्परिणाम है ईर्ष्या वृति का विकास।

**चिंतन मोती-** जो सोया रहता है, उसका भाग्य भी सोया रहता है। जो खड़ा रहता है उसका भाग्य भी खड़ा रहता है और जो चलता रहता है उसका भाग्य भी चलता रहता है। आलस्य एवं प्रमाद का त्याग करो। खड़े हो जाओ और प्रबल पुरुषार्थ करो। आप जो चाहेंगे, प्राप्त होगा। सब सौभाग्य आपकी शरण में आ जाएँगे। **(क्रमश:)**

# राव वीरमदेव सोनगरा

– हनुवंतसिंह नंगली

राव वीरमदेव सोनगरा एक ऐसा बहादुर वीर था जिसकी वीरता से मुग्ध होकर दिल्ली सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी ने अपनी पुत्री के विवाह का प्रस्ताव वीरमदेव से किया था पर वीर क्षत्रिय ने यह कहकर दिल्ली सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी के इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया,–

**मामा लाजे भाटियां कुल लाजै चहुआण।**
**जो हूँ परणू तुरकडी तो उलटौ उगे भाण।।**

राव वीरमदेव जालौर के इतिहास प्रसिद्ध शासक कान्हड़ देव का पुत्र था। अलाउद्दीन खिलजी दिल्ली सम्राट बनते ही दूसरा सिकन्दर बनना चाहता था, वह संपूर्ण भारत में अपनी विजय पताका फहराना चाहता था। उसने विक्रम सम्वत् 1350 में राजा मानसिंह से ग्वालियर, सम्वत् 1352 में यादवराम से दौलताबाद, सम्वत् 1355 में करण बाघेला से गुजरात, सम्वत् 1360 में ही रत्नसिंह जी से चित्तौड़, सम्वत् 1358 में हमीर देव चौहान से रणथम्भौर और सम्वत् 1364 में सातलदेव चौहान से सिवाना जीत लिया था। इस तरह अलाउद्दीन ने कुछ ही वर्षों में अनेक साम्राज्यों को जीतकर उन पर अपना अधिकार कर लिया था। इनको जीतने के पश्चात् सम्वत् 1362 में उसने जालौर पर आक्रमण किया इस समय जालौर में महान वीर कान्हड़ देव का शासन था। अलाउद्दीन ने गुजरात को जीतने व सोमनाथ के मन्दिर को विध्वंस करने के लिए जाने के लिए जालौर साम्राज्य की सीमा से फौज के लिए रास्ता माँगा पर कान्हड़ देव ने इसके लिये मना कर दिया इससे अलाउद्दीन नाराज हो गया–अलाउद्दीनने फिर अपनी सेना मेवाड़ के रास्ते गुजरात भेजी। गुजरात अभियान में सफलता प्राप्त कर अलाउद्दीन की सेना वापिस लौट रही थी तब उसने कान्हड़ देव को दण्डित करना चाहा। अलाउद्दीन की सेना ने सराना गाँव में अपना डेरा डाला उस समय सोमनाथ का शिवलिंग भी उसकी सेना के पास था। कान्हाड़ देव को इसका पता चला तो उसने शाही सेना का मुकाबला कर शिवलिंग को छुड़ाना चाहा। कान्हाड़ देव ने जयन्त देवड़ा के सेनापतित्व में अनेक योद्धाओं के साथ जालौर की सेना तैयारी की और शाही सेना पर आक्रमण कर पवित्र शिवलिंग को प्राप्त कर लिया। शाही फौज का सरदार भाग गया– कान्हड़ देव ने फिर इस शिवलिंग की इसी सराना गाँव में प्राण प्रतिष्ठा कराई। इस युद्ध में कान्हड़ देव के भी अनेक वीर वीरगति को प्राप्त हुए जिनमें प्रमुख भील सरदार खानड़ा एवं बेगड़ा थे व पाटन के दो राजकुमार हमीर और अर्जुन थे। वीरमदेव ने इस युद्ध में अद्भुत वीरता दिखाई और इसी वीरता की प्रशंसा सुनकर अलाउद्दीन खिलजी ने वीरमदेव की प्रशंसा सुनकर वीरमदेव को दिल्ली बुलाया था जहाँ उसकी पुत्री ने वीरमदेव से विवाह करने का प्रस्ताव रखा था। वीरमदेव के फिरोजा से विवाह के प्रस्ताव को ठुकराने से अलाउद्दीन खिलजी ने जालौर को नष्ट करने का निश्चय कर लिया। उसने मलिक नाहरखान के नेतृत्व में एक बड़ी फौज जालौर भेजी नाहरखान ने सबसे पहले सिवाणा पर आक्रमण किया ताकि राजपूत संगठित न हो सकें। कान्हड़ देव ने सिवाना के सातलदेव की सहायता की और शाही सेना को परास्त किया– इसके पश्चात् जालौर पर फिर शाही सेना की टुकड़ियाँ भेजी पर शाही सेना हमेशा विफल ही रही यह क्रम लगातार 5 वर्ष तक चलता रहा फिर संवत् 1367 में अलाउद्दीन स्वयं एक बड़ी सेना लेकर जालौर पर चढ आया। सबसे पहले उसने सिवाना के किले को घेरा और लम्बे समय तक घेरा डाले रखा आखिर एक विश्वासघाती ने किले की गुप्त सूचनाएँ दी और जल भण्डार में गौ रक्त डलवा दिया, किले में पीने का पानी नहीं रहा वीरों ने तब शाका करने का निर्णय लिया और क्षत्राणियों ने जौहर का। गढ के दरवाजे खोल दिए गये राजपूतों ने शाही सेना पर भीषण आक्रमण किया। तीन पहर युद्ध के बाद सातलदेव वीरगति को प्राप्त हुए। सिवाणा दुर्ग पर अलाउद्दीन का अधिकार हो गया। इसके पश्चात् उसने बाड़मेर, साँचौर, भीनमाल पर अधिकार किया और जालौर की ओर प्रस्थान किया। सभी खाँपों के राजूपत अपने सैनिकों व घोड़ों से

सुसज्जित होकर जालौर पहँचने लगे। जालौर की पूरी प्रजा अपने तन मन धन से सहयोग में लग गये। जयन्त देवड़ा व महीप देवड़ा के नेतृत्व में जालौर की सेना ने शाही फौज पर भीषण आक्रमण किया, शाही सेना के पैर उखड़ गये और वे भाग छूटे। उस दिन अमावस्या थी राजपूत सैनिकों ने अपने शस्त्र रखकर एक तालाब में स्नान करना आरम्भ कर दिया एक शाही सेनानायक ने जब देखा कि राजपूत शस्त्र रखकर स्नान कर रहे हैं तो उसने अपनी एक टुकड़ी के साथ निहत्थे राजपूतों पर आक्रमण कर दिया। इस आक्रमण में चार हजार राजपूत अपने दोनों सेनापतियों सहित वीरगति को प्राप्त हुए। इस जघन्य काण्ड की सूचना जालौर तक पहुँचाने के लिये एक भी व्यक्ति जीवित नहीं बचा था। कमालुद्दीन के नेतृत्व में शाही सेना ने फिर जालौर के किले पर आक्रमण किया। सात दिन तक शाही सेना ने दुर्ग को घेरे रखा पर वीरमदेवजी और मालदेवजी की रण कौशलता के कारण शाही सेना के सब प्रयास विफल रहे। फिर शाही सेना के खेमे में आग लग गई और सेना हताश होकर दिल्ली लौटने लगी। वीरमदेवजी, मालदेवजी ने भीषण धावा कर शाही सेनानायक शमशेरखान को उसके हरम सहित पकड़ लिया। जब अलाउद्दीन खिलजी को दिल्ली में यह समाचार मिला तो वह तिलमिला उठा और हर कीमत पर जालौर पर कब्जा करना चाहा। उसने अपने योग्य सेनापति मलिक कमालुद्दीन के नेतृत्व में शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित एक बहुत बड़ी सेना जालौर विजय हेतु भेजी– कान्हड़देवजी ने भाई मालदेवजी और राजकुमार वीरमदेवजी के नेतृत्व में दो सेनाएँ तैयार की। वीरमदेवजी की सेना ने भाद्राजून में मोर्चा लिया– युद्ध में दोनों तरफ की सेनाओं का भारी नुकसान हुआ कान्हड़ देव जी ने मालवदेवजी और वीरमदेवजी को मंत्रणा हेतु जालौर बुलाया– मालदेवजी तो पुनः युद्ध के मोर्चे पर आ गये और वीरमदेवजी किले की रक्षार्थ जालौर ही ठहर गये। शाही सेना ने किले का घेरा डाल दिया और खाद्य सामग्री व शस्त्रों का आवागमन रोक दिया– दुर्ग के भीतर स्थिति दिनों दिन खराब हो रही थी। जल भण्डार भी समाप्त हो रहा था पर क्षेत्र के सभी लोगों से पूरा सहयोग मिल रहा था। कुछ स्थिति में सुधार हुआ तब कान्हड़ देव के एक सरदार विका ने दुर्ग का भेद शाही सेना को दे दिया। शाही सेना को किले में प्रवेश का मार्ग मिल गया। शाही सेना ने पूरे जोर से आक्रमण किया राजपूतों ने डटकर मुकाबला किया पर कान्हड़ देवजी के मुख्य-मुख्य सरदार युद्ध में काम आये– कान्हड़ देवजी को दुर्ग के बचने की उम्मीद नहीं रही। विक्रम संवत् 1368 की बैशाख सुदी पंचमी को कान्हड़ देवजी ने वीरमदेवजी को गद्दी पर बैठाया। कान्हड़ देवजी ने अन्तिम युद्ध की तैयारी कर ली उनकी चारों रानियों ने अन्य क्षत्राणियों के साथ जौहर किया। जालौर में उस दिन सभी समाज की स्त्रियों ने 1584 स्थानों पर जौहर किया। कान्हड़ देवजी व उनके बचे हुए सरदारों ने स्नान किया मस्तक पर चन्दन का तिलक लगा गले में तुलसी की माला धारण कर अन्तिम युद्ध के लिए निकल पड़े– कान्हड़ देवजी दोनों हाथों से तलवार चला रहे थे, शाही सेना की तबाही करते हुए और अपनी मातृभूमि, धर्म और संस्कृति की रक्षा करते हुए वीर कान्हड़ देवजी बैशाख सुदी पंचमी संवत् 1368 को वीरगति को प्राप्त हुए।

कान्हड़ देवजी के वीरगति प्राप्त करने पर वीरमदेवजी ने युद्ध की बागडोर संभाली। उन्होंने भी अपने सात हजार घुड़सवार साथियों को अन्तिम युद्ध के लिये आदेश दिए और मुकाबले को निकल पड़े। साढे तीन दिन युद्ध हुआ और वीरगति को प्राप्त हुए– रानियों ने जौहर कर लिया। वीरमदेवजी ने जीते जी जालौर पर कब्जा नहीं होने दिया।

अलाउद्दीन की बेटी फिरोजा की धाय सनावर जो इस युद्ध में साथ थी, वीरमदेव का मस्तक सुगन्धित पदार्थों में रखकर दिल्ली ले गई। वीरमदेव का मस्तक जब स्वर्ण थाल में रखकर फिरोजा के सम्मुख लाया गया तो सिर उल्टा घूम गया तब फिरोजा ने अपने पूर्वजन्म की कथा सुनाई–

**तज तुरकाणी चाल हिंदुआणी हुई हमें।**
**भो भोरा भरतार, शीश ने घूणा सोनीगरा।।**

फिरोजा ने शोक प्रकट कर उनका अन्तिम संस्कार किया और स्वयं अपनी माता की आज्ञा प्राप्त कर यमुना नदी के जल में प्रविष्ट होकर अपने प्राण त्यागे।

# महंत योगी दिग्विजयनाथ जी गौरक्षक पीठ, गोरखपुर

– अधिराजसिंह

सन् 1894 में ठाकुर साहब उदयसिंह जी कांकरवा के चौथे पुत्र तेजस्वी नानूसिंह जी उर्फ स्वरूपसिंह जी का जन्म हुआ। वे बचपन से ही अपनी तेजस्विता एवं प्रखरता के कारण अन्य सभी बालकों से अलग थे। कांकरवा ग्राम चित्तौड़गढ़ तथा उदयपुर के लगभग मध्य में अरावली की पहाड़ियों तथा जंगल के बीच स्थित है। कांकरवा हवेली उदयपुर में पिछोला झील के पास ही स्थित है। जब नानूसिंह जी की आयु मात्र आठ वर्ष की थी तथा उनका जन्मोत्सव धूमधाम से मनाया जा रहा था तब उन्हें सुन्दर अचकन, गले में रत्नों से जड़ित कण्ठा, साफे पर सिरपेच तथा हाथों में अंगूठियाँ पहनाई गई। जन्मदिन के यज्ञ के बाद सभी बालकों के साथ वे खेलते-खेलते पिछोला झील के घाटों की तरफ चले गये। उसी समय नाथ सम्प्रदाय के साधुओं की एक जमात अलख निरंजन का उद्घोष करते हुए वहाँ से गुजरी। साधुओं ने उस बालक को अपने घेरे में ले लिया तथा भजन-कीर्तन करते हुए उस बालक को भी अपने साथ ले जाने में सफल रहे। कालान्तर में साधुओं की वह टोली करीब एक वर्ष के अन्तराल के बाद अपने आराध्य देव गोरखनाथ जी की पीठ गौरक्षक धाम, गोरखपुर पहुँची। तत्कालीन महन्त योगी ब्रह्मनाथ जी महाराज की दृष्टि साधुओं की जमात के साथ आये उस बालक पर पड़ी तो वे अचम्भित रह गये। बालक के मुख पर तेज देखकर वे अत्यन्त प्रभावित हुए। साधुओं की टोली से जब सख्ती से पूछताछ की गयी तो साधुओं ने बालक के बारे में संपूर्ण वृतान्त बताया कि वे उसे कहाँ से लाये हैं।

महन्त जी ने सभी साधुओं की तलाशी लेकर बालक के राजसी वस्त्र तथा जेवरात इत्यादि भी अपने कब्जे में ले लिये तथा साधुओं की उस टोली को प्रताड़ित कर वहाँ से भगा दिया। महन्त योगी ब्रह्मनाथ जी साधुओं से मिली जानकारी तथा उस बालक से पूछताछ कर संपूर्ण विवरण जान चुके थे कि यह बालक कांकरवा ठिकाने का सबसे छोटा पुत्र नानूसिंह उर्फ स्वरूपसिंह है तथा इसका अपहरण साधुओं की टोली ने पिछोला झील से किया है। महन्त जी ने अपने मन में विचार किया कि शीघ्र ही उदयपुर चलकर इस बालक को उसके परिवार के सुपुर्द कर देंगे। उस समय आवागमन के साधन अत्यन्त सीमित थे तथा विधि का विधान भी कुछ अलग था, उस बालक के उस मठ में रहते-रहते महन्त ब्रह्मनाथ जी का उस बालक के प्रति मोह बढ़ता गया। वे उसे तपस्या के मार्ग पर अग्रसर करने लगे तथा उसे दीक्षित कर अपना शिष्य बना लिया।

कालान्तर में योगी ब्रह्मनाथ जी के यही शिष्य महन्त योगी दिग्विजयनाथ जी के नाम से गौरक्षक पीठ, गोरखपुर के महन्त बने। पारिवारिक पृष्ठभूमि एवं वंशानुगत प्रभाव के कारण उन्होंने गौरक्षक पीठ, गोरखपुर को नई ऊँचाईयों की ओर अग्रसर किया। महन्त दिग्विजयनाथ जी ने देश की आजादी के संघर्ष में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। प्रारम्भिक दौर में गाँधीजी भी महन्त दिग्विजयनाथ जी पर अनन्य श्रद्धा और विश्वास रखते थे तथा महन्त जी भी गांधीजी को अपना सहयोगी मानते थे। जैसा कि हम सभी जानते हैं गोरखपुर जिला बिहार की सीमा से लगा हुआ है। जब गांधीजी ने भारत में प्रथम असहयोग आन्दोलन किसान मजदूरों का बिहार के चम्पारण क्षेत्र में आरम्भ किया तो उस आन्दोलन के प्रमुख अग्रिम पंक्ति के नेताओं में महन्त दिग्विजयनाथ जी एवं गांधीजी स्वयं थे। असहयोग आन्दोलन पूर्णत: अहिंसक रास्ते पर चल रहा था किन्तु अंग्रेजों ने धूर्ततापूर्ण चालाकी कर लोगों को उकसाया। परिणामत: चोरा-चोरी की घटना घटित हुई, गांधीजी ने आन्दोलन को समाप्त करने का निर्णय ले लिया किन्तु महन्त दिग्विजयनाथ जी ने गांधीजी के उस निर्णय का तार्किक तरीके से घोर विरोध किया तथा यह प्रमाणित

कर दिया कि चोरा-चोरी की हिंसा अंग्रेजों के सुनियोजित षड़यंत्र के तहत अंग्रेजों द्वारा प्रायोजित थी। किन्तु गांधीजी अपने निर्णय से टस से मस नहीं हुए और गरीब किसान मजदूरों के उस आन्दोलन को छोड़कर पलायन कर गये। महन्त दिग्विजयनाथ जी के मन में इस घटना का गहरा प्रभाव हुआ और उन्होंने अपना रास्ता स्वयं चुनने का निर्णय किया। पूरे देश में धार्मिक आयोजनों के माध्यम से पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन के माध्यम से वे निरंतर स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ते रहे साथ ही गौरक्षक पीठ को भी निरंतर ऊँचाईयों की ओर अग्रसर करते रहे। आज जो गौरक्षक पीठ में विशाल लाइब्रेरी व अन्य अनेकों समाजोपयोगी निर्माण नजर आते हैं उनमें से अधिकांश दिग्विजयनाथ जी की ही देन है।

महन्त दिग्विजयनाथ जी एक क्रान्तिकारी विचारों के साधु थे जिन्होंने भारत के स्वतंत्रता आंदोलन को एक नई धारा प्रदान की। उनके लम्बे समय के संघर्ष के बाद देश को आजादी प्राप्त हुई जिसमें उनका योगदान स्वर्ण अक्षरों में अंकित है। देश की आजादी के साथ ही अनेक चुनौतियाँ प्रारम्भ हो गई। महन्त जी ने हैदराबाद के विलय में अग्रणी भूमिका निभाई। निजामशाही का विरोध करने वाले वे एकमात्र ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने हैदराबाद जाकर आन्दोलनों का नेतृत्व किया। महन्त जी का कांग्रेस से मोह भंग हो जाने के बाद उन्होंने अपने जीवन का लक्ष्य हिन्दुओं के उत्थान, शिक्षा का प्रसार तथा सामाजिक कुरीतियों के खिलाफ लड़ाई को बनाया। वे देश की आजादी के बाद हिन्दू महासभा से जुड़े रहे। गोरखपुर विश्वविद्यालय की स्थापना, अनेकों टेक्निकल शिक्षण संस्थानों, मेडिकल कॉलेज जैसे अनेकों प्रकल्पों का निर्माण किया। सन् 1949 में योगी महन्त दिग्विजयनाथ जी ने अपने सहयोगी परमहंस जी व दो-तीन अन्य साधुओं के साथ बाबरी मस्जिद के गुम्बद के नीचे रामलला की प्राण-प्रतिष्ठा की। वर्तमान में सुप्रीम कोर्ट के फैसले में भी उस स्थान को रामलला विराजमान के नाम से मान्यता प्रदान की गई है। अनेकों धार्मिक, सामाजिक आन्दोलनों के महन्त जी सूत्रधार एवं प्रणेता थे। सन् 1967 में वे हिन्दू महासभा के टिकिट पर गोरखपुर संसदीय क्षेत्र से विजयी होकर लोकसभा में पहुँचे। उनके विचार एवं कार्यशैली से श्रीमती इन्दिरा गाँधी अत्यन्त प्रभावित थी। दुर्भाग्यवश उनका असामयिक निधन सन् 1969 में संसद सदस्य रहते हुए हुआ। उनकी शोकाभिव्यक्ति में श्रीमती इंदिरा गांधी तत्कालीन प्रधानमंत्री ने उन्हें महान स्वतंत्रता सेनानी तथा हमेशा अंग्रेजों के निशाने पर रहने वाले महन्त के रूप में याद किया तथा ऐसे लोग धरती पर नहीं मिलते जैसे शब्दों का प्रयोग कर उनके प्रति अपनी आस्था प्रकट की। श्री अटलबिहारी वाजपेयी ने उन्हें दृढ़ इच्छाशक्ति का महापुरुष बताया तथा लोकसभा के अध्यक्ष श्री गुरूदयाल सिंह ढिल्लों द्वारा देश की स्वतंत्रता में उनके योगदान को रेखांकित करते हुए, असहयोग आन्दोलन, साईमन कमीशन का विरोध, शिक्षा व धर्म के क्षेत्र में उनके योगदान को स्मरण किया।

सन् 1985-86 में महन्त दिग्विजयनाथ जी के शिष्य महन्त अवैध्यनाथ जी अपने गुरु के ग्राम कांकरवा आये थे तथा कुछ समय रहकर अपने गुरु की जन्मभूमि के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट की। वर्तमान गौरक्षक पीठ के महन्त योगी आदित्यनाथ जी जो वर्तमान में उत्तरप्रदेश के मुख्यमंत्री भी हैं उनके महन्त योगी दिग्विजयनाथ जी दादागुरु थे।

●

जीवन वास्तव में एक उपवन है जहाँ तरह-तरह के सुगन्धित फूल खिले हैं। किन्तु साथ ही उनमें काँटे भी होते हैं और यह बात चुनने वाले पर निर्भर है कि वह अपनी झोली फूलों से भरता है या काँटों से।

**– डॉ. लक्ष्मीनारायण**

# विचार-सरिता

## (अष्ट पञ्चाशत् लहरी)

– विचारक

जो ज्ञान को उपलब्ध हो गया, जिसने वस्तविक स्वरूप को पहचान लिया, जिसे सम्पूर्ण सृष्टि आत्मवत ज्ञात होने लग गई वह वासना रहित हो जाता है। ज्ञानी को न संसार के पदार्थों की वासना रहती है और न मोक्ष-प्राप्ति की वासना रहती है। जिसके लिये अब कोई बंधन ही नहीं रहा तो फिर मुक्ति कैसी? मुक्ति की चाह भी अज्ञान दशा में है। जिस भाग्यवान का ज्ञान-दीपक जल उठा उसके हृदय में अज्ञान का अंधेरा कैसे टिक पाएगा। प्रकाश का अभाव ही तो अंधेरा है। अलग से अंधेरे की अपनी कोई सत्ता है ही नहीं। ऐसे ही आत्मज्ञान के अभाव का नाम अज्ञान है। अज्ञान की अपनी कोई सत्ता होती तो वह मिटता कैसे?

आत्मसत्ता में प्रतिष्ठित होने के उपरान्त उस महापुरुष का मोह, ममता, तृष्णा, अहंकार, आकांक्षाएँ अपेक्षाएँ आदि सारी कल्पनाएँ भ्रमवत भाग जाती हैं। उनकी संपूर्ण दृष्टि बदल जाती है। यह समस्त संसार स्वप्नवत् भासित होने लगता है। अब वह महापुरुष अपने को संसारी न समझकर आत्मा समझने लग जाता है और उसका शरीर, मन, बुद्धि व प्रकृति से सम्बन्ध ही छूट जाता है। उसकी वासना विलीन हो गई व आसक्ति मर गई। आत्मसत्ता में जगा हुआ महापुरुष ही कह सकता है कि-''ओह! आश्चर्य है कि मैं आत्मरूप हूँ। अत: मैं निरंजन (निर्दोष) हूँ। मैं ब्रह्म हूँ, साक्षी हूँ। द्रष्टा और चेतन हूँ। मैं आकार रहित सर्वठौर विद्यमान हूँ। मेरा कोई ओर-छोर नहीं मैं तो असीम अमर आत्मा हूँ।''

सहारा असहाय को चाहिये ज्ञानी असहाय नहीं होता। वह स्वच्छन्द होता है। अपेक्षा रहित व्यक्ति ही स्वच्छन्द हो सकता है। जिसकी अपेक्षा है, वह उसी से बन्ध जाता है। मान, बड़ाई, पद, प्रतिष्ठा, घर, गृहस्थी, धनादि से जिसको अपेक्षाएँ हैं, वह उनसे अपने आप बंध जाता है। संसार में व्यक्ति को बाँधने की ताकत है ही नहीं। व्यक्ति स्वयं अपेक्षा व वासनाओं के कारण वस्तु, व्यक्ति और पदार्थ से बंध जाता है। यदि वह उन वस्तुओं से निरासक्त हो जाए, वासना रहित हो जाय तो वह नित्यमुक्त ही है। ऐसा ज्ञानी संसार-रूपी वायु से प्रारब्धवश प्रेरित होकर शुष्क पत्र की भाँति व्यवहार करता हुआ प्रतीत होता है। जैसे शुष्क-पत्ते की कोई इच्छा, वासना, मर्जी नहीं होती, जिधर हवा का झौंका ले जाए उधर ही चला जाता है। उसी प्रकार ज्ञानी भी अपने आग्रह का त्याग करके प्रकृतिरूपी वायु से प्रेरित होकर कार्य करता है।

संसार मुक्त महापुरुष को न तो कभी हर्ष होता है, न विषाद। वह शान्तमना सदा विदेह की भाँति शोभायमान होता है। जिसका मन शान्त हो गया उसका संसार भी शान्त हो गया। संसार बाहर नहीं है, संसार तो हमारे भीतर बसा हुआ है। उसकी भीतरी वासनाएँ, कामनाएँ, इच्छाएँ, आकांक्षाएँ, अपेक्षाएँ ही उसका संसार है। इन्हीं से वह बाहरी संसार को देखता है तथा इन्हीं के कारण उसे हर्ष-विषाद का अनुभव होता है।

ज्ञानी और अज्ञानी में यही तो अन्तर है कि ज्ञानी संसार में रहते हुए भी अपने भीतर संसार को उतरने ही नहीं देता और अज्ञानी के भीतर व बाहर दोनों तरफ संसार बसा हुआ है। सागर की अथाह जल राशि में नाव तभी तक तैरती है जब तक उसके भीतर पानी न भर जाए। जिस दिन नाव के भीतर पानी भर जाएगा निश्चित रूप से नाव को डूबना ही पड़ेगा। इसी प्रकार जिसके भीतर संसार बसा हुआ है वह भव-सिन्धु में निश्चित रूप से डूबेगा परन्तु जिसके भीतर संसार है ही नहीं वह शान्तमना महापुरुष विदेह की भाँति शोभायमान होगा।

शान्त व निर्मलचित्त वाले धीर पुरुष की न कहीं त्याग की इच्छा है, न कहीं ग्रहण की इच्छा है, वह तो अपने आत्मा में ही रमण करता रहता है। अज्ञानी धन, पद, प्रतिष्ठा, स्त्री, पुत्रादि, यश, मान-सम्मान में रमण करता हुआ कभी हर्ष व कभी शोक के झूले में झूलता रहता है। इन्हीं में वह सुख ढूंढ़ता है। परन्तु उसे पता नहीं कि मैं जिन पुत्रादि में सुख ढूंढ़ रहा हूँ क्या वे स्वयं पूर्णतया सुखी हैं? क्या वे सदा ज्यों के त्यों रहेंगे? क्या वे कभी दुखी होते ही नहीं? इत्यादि प्रश्नों की गहराई में जब साधक जाता है तो उसे विचार होता है कि मैं जिन कुटुम्बियों व पदार्थों का आसरा लेकर सुखी

**(शेष पृष्ठ 31 पर)**

# एकहत्तर बावड़ियों का नगर बूंदी

– स्वामी गोपालआनन्द बाबा

राजस्थान का नगर बूंदी बावड़ियों से भरा नगर (शहर) है। बूंदी नगर में लगभग 71 छोटी-बड़ी बावड़ियाँ हैं और आसपास के गाँवों को जोड़ लिया जाए, तब यह गणना 300 के पार चली जाती है। संपूर्ण राजस्थान में प्राचीनकाल से जल संरक्षण एवं संवर्द्धन की विशेष परम्परा रही है, इसलिए यहाँ बावड़ियाँ और झीलें खूब बनाई गईं। बूंदी राज्य ने इस पर विशेष बल दिया और बावड़ी व झीलों का निर्माण करवाया। एक और विशेष बात यह है कि बूंदी में पायी जाने वाली झीलें प्राकृतिक नहीं हैं, बल्कि इनका निर्माण यहाँ के शासक राजाओं ने लोकहित में करवाया था। ये झीलें आज भी बूंदी की सुन्दरता का विशेष हिस्सा हैं।

राजस्थान में बूंदी को छोटी काशी कहा जाता है। यह सदाबहार हरियाली से भरी है। शान्त और राजसी सौंदर्य से परिपूर्ण है यह नगर। राजस्थान के दक्षिण-पूर्व में बसे बूंदी की प्रसिद्धि ऐतिहासिक दुर्ग नगर के रूप में भी है। तीन ओर से अरावली पर्वत मालाओं से घिरा यह स्थान वर्ष भर हरा-भरा रहता है।

दुर्ग पहाड़ी के साये में स्थित नवलसागर वहाँ की झीलों में से एक है। चतुर्भुज आकार की इस झील के मध्य वरुण देवता का मन्दिर है। इससे कुछ दूर सुखसागर झील एक हरे-भरे उद्यान के मध्य पसरी है। यहाँ शासक राजा जनों का ग्रीष्म विश्रामागार सुखमहल भी निर्मित है। बूंदी नगर के बीचोंबीच स्थित है 'रानी जी की बावड़ी', जिसकी गणना एशिया की सर्वश्रेष्ठ बावड़ियों में की जाती है। इसमें लगे सर्पाकार तोरणों की कलात्मक पच्चीकारी देखते ही बनती है। बावड़ी की दीवारों पर भगवान विष्णु के विभिन्न अवतारों, जैसे-मत्स्य, कच्छप, वाराह, नृसिंह, वामन आदि तथा इन्द्र, सूर्य, शिव, पार्वती, गजलक्ष्मी आदि देवी-देवताओं की मूर्तियाँ लगी हैं। बावड़ी 46 मीटर गहरी है। इसका निर्माण राव राजा अनिरुद्ध सिंह की रानी नाथावतजी ने सन् 1699 में करवाया था। बावड़ी के जल-तल तक पहुँचने के लिये सौ से अधिक सीढ़ियों को तय करना पड़ता है। यहाँ राजपूत अथवा राजपूताना स्थापत्य कला के साथ मुगल स्थापत्य कला का अनुपम संयोग देखने को मिलता है। इस बावड़ी को संरक्षित संरचना का दर्जा प्राप्त है।

वर्तमान राजस्थान की राजधानी जयपुर से राजमार्ग 12 से होकर यात्री जब बूंदी नगर में प्रवेश करते हैं तब ऊँची पहाड़ी पर बना तारागढ़ किला दूर से ही सैलानियों को बूंदी की शानो-शौकत की कथा सुनाने लगता है। अंग्रेजों ने इसे 'स्टार फोर्ट' कहा जो अब तारागढ़ के स्थान पर रूढ़ हो गया है। इस दुर्गम किले का निर्माण 14वीं शताब्दी (ई.) में राव देव हाड़ा (चौहान) ने कराया था। इनमें छतर महल, बादल महल, रतन दौलत, दीवान-ए-आम जैसी विशेष संरचनाएँ हैं। बादल महल, रतन दौलत, दीवान-ए-आम को राव राजा रतनसिंह हाड़ा ने सन् 1607 से 1631ई. के बीच बनवाया था। बूंदी का किला (तारागढ़-स्टार फोर्ट) ही एक ऐसा दुर्ग है, जो मुगल काल में अजेय रहा। लगभग 3 कि.मी. की परिधि में इस अमेद्य दुर्ग की सात बार किलेबंदी की गई थी। तारागढ़ फोर्ट से संपूर्ण बूंदी नगर का विहंगम दृश्य दिखाई पड़ता है। यहाँ के दुर्ग में गिरि दुर्ग और स्थल दुर्ग की विशेषताएँ जुड़ी हैं। इसके चार दरवाजे है-पाटनपोल, भैरवपोल, शुकुलवारी पोल एवं चौगान। एक प्रकार से यह दुर्ग दो भागों में विभाजित है। ऊपरी भाग को तारागढ़ कहा जाता है, जहाँ तारागढ़ किला (फोर्ट) है। नीचे के भाग को 'गढ़' कहते हैं।

बूंदी नगर की स्थापना राव देवाजी हाड़ा (चौहान) ने सन् 1242 ई. में की थी। मान्यता है कि ''मीणा'' जाति के एक सुख्यात सरदार थे-'बूंदा मीणा', राव ने उनकी स्मृति को संजोए रखने के लिये ही नगर का नाम ''बूंदा की नगरी-बूंदी'' रखा था। राजस्थान के हाड़ौती अंचल के अन्तर्गत ही कोटा एवं बूंदी दोनों राजतंत्रीय राज्य अवस्थित रहे हैं, जो पहले एक ही थे, परन्तु बाद में

रियासत का बंटवारा हुआ और दो राज्य अस्तित्व में आए। बूंदी के निकट ही कंचल धाम गेंडोली है, जहाँ नदी के किनारे सैकड़ों शिवलिंग प्राकृतिक रूप से पाए जाते हैं। इसलिए इस स्थान को 'छोटी काशी' के नाम से भी पुकारा जाता है।

बूंदी नगर के बीचोंबीच घनी आबादी के मध्य स्थित है ''चौरासी खम्भों की छतरी'', इस छतरी में कुल 84 स्तम्भ हैं। इसे राव राजा अनिरुद्धसिंह हाड़ा के बेटे की धाय देवा (धाय-माय) की स्मृति में सन् 1683 ई. में बनवाया गया था। उक्त संरचना एक ऊँचे चबूतरे पर बनी हुई है, जिसमें दो मंजिलें (तल्ले) हैं। खम्भों पर चित्रों की नक्काशी की गई है, जो 17वीं शताब्दी ई. के राजपूत राजाओं की जीवनशैली को दर्शाती है। छतरी के मध्य शिवलिंग भी विराजमान है। तारागढ़ परिसर में चार विशाल जलाशय हैं। ये जलाशय कभी नहीं सूखते हैं। वास्तव में ये प्राचीनकाल की निर्माण अभियांत्रिकी की परिष्कृत और उन्नत विधि के प्रमुख उदाहरण हैं। किले के झरोखों से नीचे की ओर देखने पर झील का सुन्दर रूप भिन्न ही दीखता है। किले की तलहटी में बसा पुराना बूंदी नगर 'नीलानगर (ब्लू सिटी) जोधपुर जैसा दिखता है। गढ़महल के भीतर एक चित्र शाला है। इस सुन्दर संरचना का आकर्षण है-मण्डप, जो बूंदी विद्यालय के लघुचित्रों की कलात्मकता को दर्शाता है। चित्रशाला की दीवारों पर रागमाला और रासलीला की कथाओं के दृश्यों को दर्शाते चित्र हैं। बादल महल तारागढ़ किले के भीतर स्थित है, जो अपने सुन्दर भित्ति चित्रों के लिये विख्यात है। महल की दीवारों पर सुन्दर चित्रकारी की गई है। इन्हें तथाकथित मध्ययुगीन काल में बनाया गया था। इन चित्रों में दिखाए गए मुखड़े एवं फूल अत्यन्त रोचक हैं। यह समस्त चित्रकारी उस समय के इतिहास की कथा-गाथा भी बोलती प्रतीत होती है। इन चित्रों को ध्यान से देखा जाए तो पता चलता है कि इस क्षेत्र में कृषि और चीन के साथ व्यापार होता था।

राव छत्रसाल हाड़ा ने सन् 1660 ई. में छत्तरमहल का निर्माण करवाया था। वर्तमान में यह एक निजी दुर्ग है, इसलिए इसे देखने के लिये टिकट थोड़ा मंहगा है। कैमरे के लिये अलग से टिकट लेना पड़ता है। किले की ऊँचाई से बूंदी नगर का विस्तार एक सुनदर कैनवास जैसा दिखाई पड़ता है। इसकी दीवारें भी भित्तिचित्रों से सजी हैं। इसका सबसे बड़ा बुर्ज 'भीम बुर्ज' है। किले के भीतर एक बड़ा तालाब (पोखर) भी है।

शौर्य एवं पराक्रम की भूमि है-राजस्थान। बूंदी की ही थी हाड़ी रानी जिसकी कथा केवल राजस्थान ही नहीं बल्कि भारत भर में विख्यात है। यह हाड़ा राजा की पुत्री थी और मेवाड़ (उदयपुर) के सलुम्बर ठिकाने के रावत चुण्डावत की रानी थी। नया-नया विवाह हुआ था और चुण्डावत को मुगल औरंगजेब की सेना से युद्ध कर रोकना था, वह सेना का सेनापति नियुक्त हुआ था। परन्तु जैसे ही वह युद्ध के लिये घोड़े पर सवार हुआ उसने अपने महल के खिड़की में रानी हाड़ी को देखा, कहते हैं घोड़े की लगाम थी हाथों में परन्तु मन की लगाम खिड़की पर पहुँच गई, फिर भी वह युद्ध के लिये अग्रसर हुआ। लेकिन थोड़ी ही देर बाद, एक सरदार ने आकर हाड़ी रानी से कहा कि सेनानायक चुण्डावत ने कहा है कि इस युद्ध में कुछ भी हो सकता है। अत: कोई निशानी उन्होंने मंगवाई है। हाड़ी रानी समझ गई कि पति का ध्यान मेरी ओर है तो वह मन से युद्ध नहीं कर पाएंगे। अत: उसने तुरन्त ही खड़ग से अपनी गर्दन काटकर मुण्ड को हाथों से उस सरदार को पकड़ा दिया। चुण्डावत ने उस मुण्ड को गले में बाँधकर मरणान्तक युद्ध किया जिससे मुगल सेना के होश फाख्ता हो गए। अन्तत: वह मातृभूमि की बलिवेदी पर बलिदान हो गया, वीरगति को प्राप्त किया।

विश्व प्रसिद्ध ब्रिटिश फोटोग्राफर एवं लेखक वर्जीनिया फास ने अपनी पुस्तक 'दि फोर्ट्स ऑफ इण्डिया' में बूंदी की प्रशंसा में लिखा है-'बूंदी के महलों जैसा मानव निर्मित विहंगम, परिवर्धित व परिष्कृत दृश्य इस धरा पर कहीं भी देखने को नहीं मिलता।' यहाँ बूंदी-चित्रकला का वर्णन न बताना ठीक नहीं होगा। बूंदी अपनी विशिष्ट चित्रकला शैली के लिये भी विख्यात है, जो इस अंचल में मध्यकाल (तथाकथित) में विकसित हुई। बूंदी शैली में लाल, पीले रंगों की प्रचुरता और प्रकृति का सतरंगी चित्रण

विशेष रूप से पाया जाता है। रसिक प्रिया, कविप्रिया, बिहारी सतसई जैसे ग्रन्थों में वर्णित नायक-नायिका भेद, ऋतुवर्णन आदि बूंदी चित्रशैली के प्रमुख विषय थे। चूंकि इसमें पशु-पक्षियों का श्रेष्ठ चित्रण हुआ है, इसलिए इसे 'पशु-पक्षियों की चित्रशैली' भी कहा जाता है। यहाँ के चित्रों में नारी पात्र बहुत लुभावने प्रतीत होते हैं। नारी चित्रण में तीखी नाक, बादाम-सी आँखें, पतली कमर, छोटी व गोल मुखड़े आदि मुख्य विशिष्टताएँ हैं। चित्रों में आम व पीपल के वृक्षों के साथ-साथ फूल-पत्तियों और बेलों को भी चित्रित किया गया है। चित्र के ऊपर वृक्षावली बनाना और नीचे पानी, कमल, बतख आदि चित्रित करना बूंदी चित्रकला की विशेषता रही है। मुगलों के प्रभाव में आने के बाद यहाँ की चित्रकला में नया मोड़ आया और यहाँ की चित्रकला पर उत्तरोत्तर मुगल प्रभाव बढ़ने लगा। राव रतनसिंह हाड़ा ने अपने दरबार में कई चित्रकारों को आश्रय दिया। 17वीं सदी ई. में बूंदी ने चित्रकला के क्षेत्र में अत्यधिक प्रगति की। सन् 1692 ई. के एक चित्र 'बसन्तरागिनी' में बूंदी शैली और भी समृद्ध दिखती है। कालान्तर में बूंदी शैली समृद्धि की ऊँचाइयों को छूने लगी। दर्शक यहाँ की नायाब स्थापत्य कलाओं के साथ इस चित्रकला शैली के भी प्रशंसक बन जाएँगे। यहाँ देश-विदेश के पर्यटकों का तांता लगा रहता है। वे अत्यन्त चाव से यहाँ की चित्रकलाओं का अवलोकन करते हैं। वास्तव में यह सब इतना सुन्दर और आकर्षक हैं ही। हर वर्ष नवम्बर माह में स्थानीय प्रशासन और राजस्थान पर्यटन विभाग द्वारा ''बूंदी महोत्सव'' का आयोजन किया जाता है। बूंदी के आसपास के दर्शनीय स्थल हैं-गराड़िया महादेव मन्दिर, ग्राण्ड केनियन ऑफ इण्डिया, भीमलत वाटर फॉल, रामगढ़, विषधारी वाइल्डलाइफ सैंक्चुयरी।

बूंदी कोटा नगर से 35 कि.मी. दूर है, सड़क मार्ग से पहुँचना होता है। कोटा रेलमार्ग से भारत के हर ओर से जुड़ा है। कोटा में ही हवाईअड्डा भी है। बूंदी की विशेष व्यंजन है 'कत बाटी' (चूरमा की बर्फी की तरह जमाकर बनायी जाती है); यहाँ की लड्डू बाटी भी विख्यात है।

पृष्ठ 28 का शेष

## विचार-सरिता

होना चाहता हूँ, वे तो पहले से दुःख के सागर में गोते लगा रहे हैं, तो मैं इनसे सुख की कामना करके बड़ी भारी भूल कर रहा हूँ। दूसरों के द्वारा मिलने वाला सुख तो क्षणिक होता है। वे स्वयं स्थायी नहीं तो उनका सुख स्थाई कैसे हो सकता है। दूसरों के द्वारा दिये गए सुख पर आधारित होना ही गुलामी है। साधक सुख की चाह में बंध जाता है, यही उसका बंधन है।

जंगल में स्वच्छन्द विचरने वाले बंदर की दृष्टि जब जमीन में गड़े हुए घड़े में रखे दो मुट्ठी चनों पर जाती है तब वह दोनों हाथों से चनों को मुट्ठी में भर लेता है और चनों सहित हाथ बाहर निकालना चाहता है। चनों में सुख की कामना इतनी प्रगाढ़ होती है कि वह चनों को छोड़ना नहीं चाहता और उसे लगता है कि उसे किसी ने घड़े के भीतर बांध लिया है। चनों की आसक्ति ने उसे बांधा है, यदि वह चनों को छोड़ दे तो वह हाथ बाहर निकाल सकता है। दो मुट्ठी चनों की आसक्ति में उसके गले में जंजीर पड़ी और वह जीवनभर मदारी की आज्ञा में दुनिया के सामने नाच-नाच कर मदारी की झोली भरता रहता है क्योंकि वह मदारी का गुलाम जो है। ऐसे ही पदार्थों व परिवार की आसक्ति हम छोड़ना नहीं चाहते, इसीलिए गृहस्थ में पुत्र और पौत्र के द्वारा ठगे जाकर जीवन भर गुलामी का जीवन जीकर यहाँ से खाली हाथ चले जाते हैं।

थोड़े से सुखों के कारण मनुष्य अपने को दूसरों के हाथों बेच दे इससे अधिक मानवता का क्या अपमान हो सकता है। इसलिए ज्ञानी पुरुष इच्छामात्र का ही त्याग कर देता है, न त्याग की इच्छा करता है न ग्रहण की। वह केवल अपनी आत्मा में रमण करता हुआ निर्मल चित्त वाला होकर शाश्वत सुख आत्मानंद का उपभोग करता है। आत्मिक-बोध के अतिरिक्त ऐसा कोई सुख है ही नहीं जो स्थाई व शाश्वत रहे इसलिए साधक को चाहिये कि समस्त वासनाओं का परित्याग करके अपने निज स्वरूप में स्थिति पाने का अभ्यास करे। इसी में जीवन की सार्थकता है और इसी में साधक की भलाई है।

**ओम् शान्ति! ओम् शान्ति!! ओम् शान्ति!!!**

धारावाहिक

# चित्रकथा – 'लोकदेवता बाबा रामदेव जी'

– बृजराजसिंह खरेड़ा

लोग नये गांव के निर्माण में जुट गये
हमारे लिए तो जहां रामदेव कुंवर जी वहीं पोकरण, वहीं अपना गांव
हमारे सुख-दुख में सदा साथ देनेवाले देवता-पुरूष के बिना पोकरण में कैसे रहते।
गांव का नाम रखा रामदेवरा
काई भी शुभ काम की शुरूआत मैं तो कुंवरजी के दर्शन के साथ करता हूं
कुंवर जी तो हमारे लिए देवता हैं ... मैं तो प्रतिदिन उनके दर्शन के लिए जाता हूं
रामदेवरा में कुआ एक ही है, ऊंची जाति वाले दूसरों को पानी भरने से रोकते हैं।
डाली! मेरे बसाये गांव में भी छुआ छूत!... नहीं मैं ऐसा नहीं होने दूंगा
भाईयों जब हमारा धर्म एक है, तो यह भेदभाव क्यों?... भगवान ने हम सब को एक जैसा बनाया है, फिर ऊंच-नीच क्यों?
क्या कोई मनुष्य, मनुष्य के स्पर्श से अपवित्र हो सकता.. हम सब में एक ही भगवान बिराजमान हैं.. आप अज्ञानवश भगवान का निरादर कर पाप के भागीदार हो रहे हैं।
रामदेव जी आज के बाद रामदेवरा में छुआ छूत किसी के साथ नहीं होगी

# अपनी बात

जो मनुष्य अपने को भी नहीं पा सका है वह और क्या पायेगा। खुद को छोड़कर चाहे वह सारे जगत का साम्राज्य भी पाले तो भी आखिर में पाएगा कि उसके हाथ खाली के खाली हैं। सिकंदर जिस दिन मरा, उस दिन जब राजधानी में उसकी अर्थी निकली तो लोग हैरान हो गए। एक ही बात उस दिन उस राजधानी में राजपथ पर गूंजने लगी, हजार-हजार होठों पर, हजार-हजार मुँह से एक ही बात पूछी जाने लगी कि यह क्या है? सिकन्दर के दोनों हाथ अर्थी के बाहर लटके हुए थे। ऐसी अर्थी कभी भी नहीं निकली थी। लोग पूछने लगे कि क्या कोई भूल हो गई है? अर्थी के बाहर दोनों हाथ क्यों लटके हुए हैं? हाथ तो अर्थी के भीतर होते हैं। धीरे-धीरे लोगों को पता चला, सिकन्दर ने मरने से पहले कहा था, मेरे हाथ अर्थी के बाहर रखें जाएँ ताकि लोग देख लें कि मैं भी खाली हाथ दुनिया से जा रहा हूँ। मैंने बहुत कुछ जीता। जमीन करीब-करीब जीत ली थी और जो भी ज्ञात था वह सब मेरा साम्राज्य हो गया। लेकिन मरते समय मैं अनुभव करता हूँ कि मुझसे ज्यादा दरिद्र आदमी और कोई नहीं है। और दुनिया यह बात देख ले कि एक सम्राट भी खाली हाथ मरता है। इसलिए मेरे हाथों को अर्थी के बाहर खुले लटक रहने देना।

हम सबके हाथ भी खाली ही जाते हैं, और खाली जाएंगे ही। क्योंकि एक ही सम्पदा है जो प्राणों को भर सकती है और वह हमारे भीतर है। बाहर जो भी सम्पदा है, उससे हम भ्रम में रहें भला कि उसे इकट्ठा करके हम अपने प्राणों को भर लेंगे, परिपूरित कर लेंगे, लेकिन आज तक यह न हुआ है और न ही होगा। हम कोई इसके अपवाद नहीं हो सकते हैं। जीवन का नियम यही है। जो बाहर है वह भरने का भ्रम देता है लेकिन भर नहीं पाता। और जो भीतर है वही केवल भर सकता है और उसे लाने को भी कहीं नहीं जाना है, कोई यात्रा नहीं करनी है। कोई युद्ध नहीं करना है, कोई आक्रमण नहीं करना है। केवल आँखे घुमानी है और भीतर खोज लेना है। वह दर्पण मिल जाए भीतर का तो यह खोज पूरी हो सकती है।

हम में से सारे लोग ही, शायद ही उसकी खोज में है। हम में से शायद ही कोई व्यक्ति हो जो दुखी, पीड़ित और अशान्त नहीं है। हम में से शायद ही कोई हो जो खाली-खाली अनुभव नहीं करता। हम में से शायद ही कोई हो जिसे यह एहसास नहीं होता कि मेरा जीवन पानी पर खींची गई लकीरों की भाँति रोज मिटा जा रहा है और मेरे हाथों में कुछ भी उपलब्धि नहीं है। कोई पाना नहीं है, मैं खाली और रिक्त जी रहा हूँ और मर रहा हूँ।

यह जो एहसास है खाली और रिक्त होने का, सारी दुनिया में हर आदमी को अनुभव हो रहा है। इस रिक्तता के अनुभव को भरने वह उपाय करता है। लेकिन वे उपाय भी अगर बाहर ही हों तो उन उपायों से भी कुछ भी नहीं हो पाता। जब हम पीड़ित और परेशान होते हैं तो हम भगवान की तलाश में निकलते हैं। मंदिरों में खोजते हैं, पहाड़ों पर और तीर्थों में खोजने जाते हैं और दूर-दूर की यात्राएँ उसके लिए करते हैं। लेकिन एक बात भूल जाते हैं कि हमारे भीतर जो प्राणों का प्राण बैठा हुआ है, क्या कभी उसको भी खोजेंगे? क्या कभी उसको भी पहचानेंगे? इसके पहले कि कोई किसी और खोज में जाए, जिसके पास थोड़ी समझ और बोध है, उसे अपनी खोज कर लेनी चाहिए। हो सकता है, जिसे हम खोजना चाहते हों वह हमारे भीतर मौजूद हो। और हो सकता है जहाँ हम उसे खोज रहे हैं, वहाँ वह बिल्कुल भी मौजूद न हो।

जिन लोगों को यह ख्याल पैदा होता है कि हम सत्य की खोज करें, वे मंदिरों में उस खोज को करने लगते हैं। यह भूल हो जाएगी। सत्य की खोज करनी हो तो खुद को मंदिर बनाना होगा। हाँ, हर आदमी खुद मंदिर बन सकता है जहाँ भगवान का प्रवेश हो सके। बने कैसे? चित्त दर्पण बन जाए तो आदमी मंदिर बन सकता है। चित्त दर्पण बन जाए तो आदमी इसलिए मंदिर बन सकता है कि उसी दर्पण में भगवान की छवि उतरनी शुरू हो जाती है। चित्त दर्पण बन जाए तो हम खुद को तो देख ही पाएंगे, और खुद को देखने में हम यह भी जान पाएंगे कि उस खुद में ही वह भी छिपा था जो भगवान है, स्वयं में वह भी छिपा था जो सत्य है। यह जानकर ही जीवन में खालीपन नष्ट होता है। अत: चित्त को दर्पण बनाएँ, निर्मल बनाने की साधना में रत हों।

# पू. आयुवानसिंह जी के जन्म शताब्दी वर्ष पर पुण्य स्मरण

नरेन्द्रसिंह नरधारी

तेरी गाथा तुझे समर्पित,
वही समर्पण भाव लिये।
किया समर्पण तुमने जिनको,
जीवन का अरमान जिये।।

प्रबन्धक – प्रतापसिंह राठौड़
मो. 9829222317, 8003497513

राजस्थान सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त

## स्वामी विवेकानन्द पब्लिक स्कूल

निम्बला ब्लॉक शिव, बाड़मेर
मान्यता क्रमांक – 1584/2007

## श्री भगवती विद्या मन्दिर

थूम्बली, ब्लॉक शिव, बाड़मेर
मान्यता क्रमांक – 3435/2011

# श्री मोहन गुरुकुल हॉस्टल

मयूर नोबल्स एकेडमी के पास, गाँधी नगर बाड़मेर (राज.)
लगातार पिछले 15 वर्षों से आपकी अपेक्षा पर खरा उतरने वाला आपका अपना छात्रावास

शिक्षण, आवास व भोजन की उत्तम व्यवस्था, अनुभवी अध्यापकों द्वारा अतिरिक्त शिक्षण व्यवस्था, अत्याधुनिक सुविधाओं से युक्त आध्यात्मिक, शारीरिक व बौद्धिक शिक्षा एवं संस्कारों हेतु आवश्यक सुविधाओं से युक्त संस्थान।

कक्षा 10वीं 2020 का परिणाम

| | | |
|---|---|---|
| प्रेमसिंह मेदूसर | 1134200 | 94% |
| दिपेन्द्रसिंह फलिया | 1233885 | 91% |
| हिन्दुसिंह मुलाना | 1233943 | 89% |
| जसवंतसिंह झोटड़ा | 1233963 | 81% |
| गुलशन खत्री बिशाला | 1233923 | 80.33% |
| मदनसिंह सुरा | 1234066 | 78.17% |
| रविन्द्रसिंह झोटड़ा | 1234252 | 73% |
| भुपेन्द्रसिंह उण्डा | 1233831 | 76% |
| अचलसिंह भीखसर | 1278568 | 60% |
| मनोहरसिंह सरली | 1278660 | 58% |
| रघुवीरसिंह शिव | 1278692 | 56% |
| रविन्द्रसिंह राणीगाँव | 1234251 | 56% |
| ईश्वर सिंह मुंगेरिया | 1233951 | 56% |
| तेजपालसिंह बलाई | 1278722 | 52% |
| दिलीपसिंह झांफली | 1278595 | 50% |

कक्षा 12वीं कला वर्ग 2020 का परिणाम

| | | |
|---|---|---|
| प्रदीपसिंह सांकड़ा | 2990597 | 78.8% |
| महिपालसिंह खारा | 2969319 | 74% |
| सुमेरसिंह बिशाला | 2990599 | 69.4% |
| विक्रमसिंह खेजड़ियाली | 2990623 | 64.4% |

कक्षा 12वीं विज्ञान वर्ग 2020 का परिणाम

| | |
|---|---|
| रावलदान | 81% |
| देवेन्द्रसिंह | 80% |
| गेनसिंह | 73% |
| जसवंतदान | 72% |
| शेम्भुसिंह | 70% |
| अभयसिंह | 64% |
| पूनमसिंह | 63% |
| भवानीसिंह | 63% |
| दुर्जनसिंह | 60% |
| दशरथसिंह | 54% |

प्रेमसिंह मेदूसर
94% Class 10

दिपेन्द्रसिंह फुलिया
91% Class 10

हिन्दुसिंह मुलाना
89% Class 10

सम्पर्क सूत्र :-
अशोक सिंह भीखसर
(M.A., B.ed.)
मो. 9982691010, 8003497505

Yuvraj Singh Sodha 9783914900 | Shashi Rathore 9829110211 | Ashok Singh Bhikhsar 8003497505

# ATLAS GLOBAL ACADEMY

# एटलस ग्लोबल एकेडमी

**ENGLISH MEDIUM**

**Admission are Open**

*for Pre-Primary and Primary Classes*

1. Reasonable Fee Structure
2. Qualified and Trained Teachers
3. No Heavy Bags.
4. Audio-Visual Classroom
5. Indoor-Outdoor at games.
6. Innovative Teaching
7. Appropriate Student Teacher Ratio.
8. Personal Attention Towards each child.
9. Integrated Curriculum for Holistic Approach.

**Gandhi Nagar, Barmer 344001 (Raj.)**
**Email : atlasglobalacademy@gmail.com**

# पू. आयुवानसिंह जी के जन्म शताब्दी वर्ष पर पुण्य स्मरण

# IAS / RAS

तैयारी करने का राजस्थान का सर्वश्रेष्ठ संस्थान

## स्प्रिंग बोर्ड
## Spring Board

Springboard Academy, Main Riddi Siddi Choraha,
Opposite Bank of Baroda, Gopalpura, Bypass Jaipur

**Website : www.springboardindia.org**



अक्टूबर, सन् 2020
वर्ष : 57, अंक : 10

समाचार पत्र पंजी.संख्या R.N.7127/60
डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City /411/2020-22



# संघशक्ति

ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा,
जयपुर-302012
दूरभाष : 0141-2466353

E-mail : sanghshakti@gmail.com
Website : www.shrikys.org


श्रीमान् ..........................................................

..........................................................

..........................................................


स्वत्वाधिकारी श्री संघशक्ति प्रकाशन प्रन्यास के लिये, मुद्रक व प्रकाशक, लक्ष्मणसिंह द्वारा ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर से : गजेन्द्र प्रिन्टर्स, जैन मन्दिर सांगाकान, सांगों का रास्ता, किशनपोल बाजार, जयपुर फोन : 2313462 में मुद्रित। सम्पादक-लक्ष्मणसिंह